ओस की बूँद

राही मासूम रज़ा

राजकमल प्रकाशन

दिल्ली • पटना

नय्यर ग्रौर मरियम की उस तस्वीर
के नाम जिसे गवाह बनाये बिना
ग्रब मैं कुछ नही लिखता।

—राही मासूम रज़ा

क्रम

डायरी का एक पन्ना ६
अ पर ओ की मात्रा ११
स २०
क पर ई की मात्रा ४३
चन्द्र बिन्दु ७६
द ११७
बयाने-तहरीरी १२७

भूमिका

बडे-बूढो ने कई बार कहा कि गालियाँ न लिखो, जो 'आधा गाँव' मे इतनी गालियाँ न होती तो तुम्हे साहित्य अकादमी का पुरस्कार अवश्य मिल गया होता, परन्तु मैं यह सोचता हूँ कि क्या मैं उपन्यास इसलिए लिखता हूँ कि मुझे साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिले ? पुरस्कार मिलने मे कोई नुकसान नही, फायदा ही है। परन्तु मैं साहित्यकार हूँ। मेरे पात्र यदि गीता बोलेंगे तो मैं गीता के श्लोक लिखूगा। और वह गालिया बकेंगे तो मैं अवश्य उनकी गालियाँ भी लिखूगा। मैं कोई नाजी साहित्यकार नही हूँ कि अपने उपन्यास के शहरो पर अपना हुक्म चलाऊँ और हर पात्र को एक शब्दकोश थमाकर हुक्म दे दू कि जो एक शब्द भी अपनी तरफ से बोले तो गोली मार दूगा। कोई बडा-बूढा यह बताये कि जहाँ मेरे पात्र गाली बकते हैं वहा मैं गालियाँ हटाकर क्या लिखू। डॉट डॉट डॉट ? तब तो लोग अपनी तरफ से गालियाँ गढने लगेंगे ! और मुझे गालियो के सिलसिले मे अपने पात्रो के सिवा किसी पर भरोसा नही है।

गालियाँ मुझे भी अच्छी नही लगती। मेरे घर मे गाली की परम्परा नही है। परन्तु लोग सडको पर गालिया

बकते हैं। पडोस से गालियो की आवाज आती है और मैं अपने कान बन्द नहीं करता। यही आप करते होंगे। फिर यदि मेरे पात्र गालिया बकते हैं तो आप मुझे क्या दौडाते हैं? वह पात्र अपने घरो मे गालियाँ बक रहे हैं। वह न मेरे घर मे हैं, न आपके घर मे। इसलिए साहब, साहित्य अकादमी के इनाम के लिए मैं अपने पात्रो की जबान नही काट सकता। इस उपन्यास के पात्र भी कही-कही गालियाँ बकते हैं। यदि आपने कभी गाली सुनी ही न हो तो आप यह उपन्यास न पढिए। मैं आपको क्लश करवाना नही चाहता।

—राही मासूम रजा

डायरी का एक पन्ना

डायरी लिखना बडी बेवकूफी की बात है, क्याकि डायरी मे सत्य लिखना पडता है, और कभी कभी सत्य लिखना नही होता। कभी कभी तो यह जानना भी असम्भव हो जाता है कि सत्य क्या है और असत्य क्या है। परन्तु सत्य परछाईं की तरह साथ लगा रहता है। कोई लाख चाहे कि परछाईं स पिंड छूट जाए, परन्तु यह सम्भव नही। जबतक आत्मा का सूय अस्त नही हो जाता, ये परछाइया साथ लगी रहती हैं, इसलिए इन परछाइया से जान छुडाने की सिफ एक शक्ल है कि मनुष्य इनकी आँखो म आखे डाल द और कहे हाँ हा मुझे मालूम है

सच पूछिए तो मैं यह डायरी इसीलिए लिख रहा हू कि समय की आखो म आँखें डालकर यह कह दू हा हाँ, मुझे मालूम है कि कल पाकिस्तान वन गया, मुझे यह भी मालूम है कि आज भारत स्वतन्त्र हो गया है, और मुझे यह भी मालूम है कि मेरा नाम मुहम्मद वकारुल्लाह अन्सारी है

परन्तु क्या सच केवल इतना ही है कि कल पाकिस्तान बना और आज भारत स्वतन्त्र हुआ और यह कि मेरा नाम मुहम्मद वकारुल्लाह अन्सारी है ? क्या वे पिछली शताब्दिया सत्य नही है जो गुजर गयी ? और क्या वह क्षण सत्य नही है जो अभी-अभी गुजरा है ? और आने वाली शताब्दियाँ भी क्या सत्य नही है ?

मेरे घर पर तिरगा लहरा रहा है और घर मे सबको यह फिक्र है

कि बड़े भाई 'दिल्ली म हैं' कहा जाये या दिल्ली म थे' कहा जाये ? क्या यह प्रश्न भी उतना ही बडा सत्य नहीं है, जितना बडा सत्य यह है कि कल पाकिस्तान बन गया और आज भारत स्वतन्त्र हो गया है ?

और आज का सबसे बडा सत्य तो यह है कि मैं आज बहुत खुश हूँ और बहुत परीशान भी।

(वहशत असारी की डायरी का एक पन्ना)

इन्कलाब पसन्दों की यात्रा
[illegible]

'मुस्लिम ऐंग्लो वर्नाक्युलर हाई स्कूल' का नाम बदलकर 'मुस्लिम ऐंग्लो हिन्दुस्तानी हायर सेकेंडरी स्कूल' रख लिया गया। पुराना टिनवाला बोर्ड उतर गया और दीवार पर सीमेंट के शब्दों से यह नया नाम लिख दिया गया ताकि शहरवालों को मालूम हो जाये कि यही नाम अब मुस्तकिल हो गया है।

यह फैसला बहुत सोच-विचार के बाद किया गया था। स्कूल की वर्किंग कमेटी के प्रेसिडेंट श्री हयातुल्लाह अन्सारी ने कमेटी के दूसरे लोगों को बहुत देर तक समझाया कि देश के स्वतन्त्र हो जाने के बाद 'वर्नाक्युलर' बहुत बुरा लगेगा और सरकार को खुश करने के लिए 'वर्नाक्युलर' की जगह 'हिन्दुस्तानी' कर देना आवश्यक है। कमेटी के एक मेंबर श्री वज़ीर हसन ने प्रश्न उठाया कि 'हिन्दुस्तानी' तो ठीक, लेकिन जब स्कूल में हायर सेकेंड्री तक पढ़ाई नहीं होगी तो 'हायर सेकेंड्री' का दुमछल्ला क्यों लगाया जाये? परन्तु हयातुल्ला अन्सारी के पास हर सवाल की तरह इस सवाल का जवाब भी तय्यार था। बोले

> आप लोग भी कमाल करते हैं। कांग्रेस सरकार को चूतिया बनाने का यही मौका है। बलवा में इतने मुसलमान मारे जा रहे हैं कि बलवों के बाद सरकार मुसलमानों को फुसलाना शुरू करेगी। ओही लपट में ई इस्कूलो हायर सेकेंड्री हो जइहै।

परन्तु वज़ीर हसन भी चूकनेवाले नहीं थे। बोले

तो ऐसा क्यों न किया जाये कि स्कूल का नाम मुस्लिम एंग्लो
हिन्दुस्तानी युनिवर्सिटी रख दिया जाय। शहर में कोई युनिवर्सिटी
है भी नहीं। सरकार सोचेगी, चलो नाम पहले से मौजूद है तो
युनिवर्सिटी खोल ही दिया जाये।

श्री हयातुल्लाह असारी ने अपनी गांधी टोपी को सिर पर ठीक से
जमाते हुए वज़ीर हसन की तरफ देखा। वह अपनी टोपी और वज़ीर
हसन दोनों ही से खुश नहीं थे।

बात यह है कि वह और वज़ीर हसन दोनों ही साथ-साथ मुस्लिम
लीग में शामिल हुए थे। वज़ीर हसन बड़ी ही जोशीली तकरीरें किया
करते थे। श्री असारी को भाषण के खयाल ही से कँपकँपी लग जाया
करती थी। नतीजा यह हुआ कि वज़ीर हसन मुस्लिम लीग की जिला
कमेटी के सेक्रेटरी हो गए और असारी साहब सिर्फ नायब सदर बन
सके। नायब सदर कहने में तो सेक्रेटरी से भला लगता है, परन्तु नायब
सदर की हैसियत ही क्या। सदर न हो तो नायब सदर को मौका
मिले। और ऐसा कभी होता ही नहीं था कि सदर न हो।

जिला कमेटी के सदर श्री गुलाम मुहम्मद उमर थे। यह जिला
कमेटी के सदर और गुलाम मुहम्मद उमर होने के साथ साथ हाजी भी
थे—और दौलतमन्द भी। तम्बाकू और गुलाब जल का कारोबार करते
थे जबकि श्री हयातुल्लाह असारी एम०ए० एल०एल० बी० (अलीगढ़)
केवल एक वकील थे जिनकी वकालत किसी तरह चलती ही नहीं थी।
अड़ियल टट्टू की तरह थान ही पर हिनहिनाया करती थी। और ईमान
की बात तो यह है कि असारी मुसलमान जमींदारों को फाँसने के लिए
ही मुस्लिम लीग में आए थे। और हुआ भी यही। मुस्लिम लीग में
आते ही उनकी वकालत चल निकली। बाबू चन्द्रिकाप्रसाद और वज़ीर
हसन आबदी जैसे वकील घर रह गए। जमींदारों को यह तो बहुत बाद
में मालूम हुआ कि मुकद्दमा इस लीगी इस्लाम से बड़ा होता है। परन्तु
इस बीच में वह जिला बार असोसिएशन के नायब सदर भी हो गए।
और उन्होंने काज़ीटोला में एक पक्का मकान भी बनवा लिया। और
इसी अरसे में उनकी बड़ी लड़की की शादी भी एक बड़े अच्छे घर में

हा गई। बडा बेटा अपना मजे मे अलीगढ मे पढ रहा था और शायरी कर रहा था। मुस्लिम लीग के जलसो मे नज्मे सुना सुनाकर वह खासा मशहूर भी हो गया था और मुशायरा मे बुलाया जाने लगा था और उसन बडे बडे शायरो की ऐसी-तैसी कर रखी थी। हाजी गुलाम मुहम्मद उमर अपनी बडी लडकी से उसका ब्याह करना चाहते थे वहशत असारी का बाप होना कोई मामूली बात नही है साहब

गरजकि श्री असारी के जीवन मे हर तरफ खरियत ही खैरियत थी

फिर भी एक दुख था कि लीडरी वजीर हसन ही कर रहा था। और लीडरी वजीर हसन इसलिए कर रहा था कि उसे भाषण देना आता था। और इसीलिए वह जिला कमेटी का जनरल सेक्रेटरी हो गया और वह नायब सदर के नायब सदर रह गए। जब भी कोई 'आल इडिया लीडर' आता तो वह वजीर हसन ही से बातें करता, क्योकि जिला कमेटी के सदर हाजी गुलाम मुहम्मद उमर तो एक अँगूठा टेक व्यापारी थे। वह सुर्ती और चोट के भाव पर बाते कर सकते थे। पाकिस्तान बारे मे तो उन्हे केवल यह मालूम था कि कायदे आजम कर रहे हैं तो कोई अच्छी ही चीज होगी।

वजीर हसन ने हाजी साहब को एक और पते की बात भी समझा रखी थी। वह बात यह है कि पजाब के लोग बहुत हुक्का पीते हैं। इसलिए जब लाहौर मे उनकी दूकान पर यह बाड बनेगा कि 'हाजी गुलाम मुहम्मद उमर ताजिर तम्बाकू कशीदनी व खुदनी व अरक गुलाब (गाजीपुरवाला) साबिक सदर जिला कमेटी आल इडिया मुस्लिम लीग, गाजीपुर तो कारोबार चमक जाएगा। यह बात हाजी साहब की समझ म आ गई थी। और इसलिए पाकिस्तान एक तरह से उनका कारोबार भी हा गया था। वह जी जान से पाकिस्तान बनवाने म लग गए थे। पर तु इसका मतलब यह तो नही था न कि वह चौधरी खलीकुज्जमा या महम्मदाबाद के राजा या साहबजादा लियाकत अली खा से बाते भी कर सकें। तो सदर जिला कमटी यो गए और नायब सदर एम० ए०, एल० एल० बी० (अलीगढ) होने के बावजूद बालने मे जरा कमजोर

पडते थे। खड़ी बोली म बात शुरू करते और दो चार जुमला के बाद भोजपुरी उर्दू पर उतर आते। इसलिए जब मुस्लिम लीग के आल इडिया लीडर आते (चाहे वह लार ये जहीरुद्दीन ही क्यो न हो[1]) तो उनसे बातें करने के लिए उनके पास वजीर हसन ही आगे बढाए जाते और श्री असारी दिल मसोस कर रह जाते।

फिर भी श्री असारी के दिल म एक अरमान कुलबुलाया करता था कि वह किसी कमेटी या सस्था के सदर हो जाएँ। ता साहब खुदा का करना ऐसा हुआ कि सन चयालीस मे यह अवसर भी आ गया। मुस्लिम लीग न 'मुस्लिम ऐंग्लो वर्नाक्युलर हाई स्कूल पर कब्ज़ा कर लिया। खानबहादुर शेख सुबहानुल्लाह बक जौनपुरी' निकाल दिए गए। सदर की जगह खाली हो गई। वज़ीर हसन अपनी गोटिया फैला चुके थे। उन्हें एक सदर की जरूरत थी। श्री हयातुल्लाह असारी से अच्छा सदर मला उन्हें आर कौन मिलता और श्री हयातुल्लाह असारी का अरमान पूरा हो गया।

श्री हयातुल्लाह असारी बेचारो ने कभी सोचा भी नही था कि पाकिस्तान वाकई बन जायगा। उनका तो यह खयाल था कि अग्रेज जानेवाला ही नहीं है। सर सय्यद अहमद खा स लकर श्री हयातुल्लाह असारी तक बहुत से मुसलमान बुद्धिजीवियो का यही खयाल था कि ब्रिटिश सरकार का सूर्य अस्त होने क लिए नही निकला है। और इसीलिए उनके तमाम सपनो का आधार यही झूठा सच था। जो श्री हयातुल्लाह असारी को जरा भी यकीन होता कि पाकिस्तान बन जायगा तो वह उन बयानो पर कभी दस्तखत न करते जो उनके नाम स लीग की अंग्रेजी और उर्दू की पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते रहे।

श्री असारी के पास एक स्क्रैप बुक थी। उस स्क्रैप बुक म उनकी तमाम तस्वीरा और बयानो के तराशे चिपके हुए थे। वह अक्सर उन बयाना का पढकर खुश हुआ करते थे जबकि उनके तमाम बयान वजीर हसन के लिखे हुए हुआ करत थ। वह गदन मिटकत—वजीर

---

[1] या हिम्मत जौनपुरी क दादा।

के सिवा और कौन जानता है ? नाम तो मेरा ही छपता है। यह तस्वीर किसकी है ? वज़ीर हसन की या उसके बाप की

'आगे चलकर आलीजनाब मोलवी ह्यातुल्लाह साहब अंसारी, एम० ए०, एल० एल० बी० (अलीगढ़), नायब सदर मुस्लिम लीग ज़िला गाज़ीपुर ने हमारे मखसूस नामा निगार को बताया कि गाधी एक बगला भक्त है। ऊपर से कुर्आन पढ़ता है मगर कट्टर मुसलमान दुश्मन है। और जवाहरलाल एक बहुरूपिया है। और हमें सियासत का नाटक दिखला रहा है "

इस प्रकार के अनगिनत बयान थे। इन्हें पढ़कर श्री अंसारी आराम से सो जाया करते थे।

सन् पैंतालीस के चुनाव में मुस्लिम लीग की जीत के बाद भी उन्हें यह ख़याल नहीं आया कि पाकिस्तान बनने ही वाला है।

परन्तु जब पाकिस्तान बन गया तो यह ख़याल उन्हें भिड़ की तरह चिमट गया कि पाकिस्तान बहुत दूर बना है और उन्हें गाधी और नेहरू के हिन्दुस्तान में ही रहना है। उनकी स्क्रैप बुक उन्हें डरावने सपने दिखाने लगी। अब मैं किसी को कैसे समझाऊँगा कि ये बयान वास्तव में वज़ीर हसन के हैं बहनचाद क्या यह तस्वीर भी वजीर हसन की है !

और इसीलिए पाकिस्तान बन जाने के बाद उन्हें वजीर हसन से नफरत हो गई। और एक दिन उन्होंने अपनी कराकुली जिन्ना टोपी अपने नौकर को दे दी। यह टोपी उन्होंने बड़े चाव से खरीदी थी। परन्तु उन्हें नगे सिर रहने की आदत नहीं थी। तो एक दिन वह श्री गाधी आश्रम से एक गाधी टोपी खरीद लाए और दो चार दिन के बाद बनारस के एक समाचार पत्र में उनका एक बयान छपा था कि भारत के मुसलमानों को काग्रेस में चला जाना चाहिए। पाकिस्तान एक गलती है

खादी के कपड़े पहनने में उन्हें बड़ी तकलीफ होती थी। परन्तु चारा ही क्या था ? वजीर हसन के लिखे हुए बयानों पर दस्तख़त करने की सजा तो भुगतनी ही पड़ेगी ना !

उन दिनों काग्रेसवाले भी कुछ जल्दी में थे। उन्हें पता था कि चुनाव में उन्हें मुसलमान वोटों की जरूरत पड़ेगी। इसलिए उन्होंने

धड़ाधड़ पुराने मुस्लिम लीगियों को शहर कमेटी, जिला कमेटी, अल्लम कमेटी और गल्लम कमेटी में भरना शुरू कर दिया। और इसी झटके में श्री हयातुल्लाह असारी के घर का बोर्ड उतर गया और एक नया बोर्ड बनाया गया जिस पर 'मौलवी' की जगह 'श्री' लिखा गया। 'नायब सदर जिला मुस्लिम लीग' की जगह 'नायब सदर जिला काग्रेस कमेटी' लिखा गया। 'अलीग' मिटाया तो नहीं गया, परन्तु अक्षर बहुत छोटे कर दिए गए।

वजीर हसन ने यह बोर्ड देखकर कहा

'अरे भई! साबिक मौलवी और साबिक नायब सदर साबिक आल इण्डिया मुस्लिम लीग भी लिखा लेते तो ज्यादा रोब पड़ता।"

यह सुनकर बेचारे श्री हयातुल्लाह खिसियाने के सिवा और कर ही क्या सकते थे। चुनाचे वह खिसिया लिये। उनकी खिसियाहट देखकर वज़ीर हसन ने कहा

'मैं काग्रेसी नहीं बनूगा। बाकी तुम फिक्र न करो। तुम्हारे बयान लिख दिया करूँगा। 'आज' में जो तुम्हारा बयान निकला है वह बहुत चूनियापे का है।"

वज़ीर हसन ने बहुत कड़वी बात कही थी। परन्तु श्री असारी उसे अपने कहकहे के वरक में लपेटकर जल्दी से निगल गए।

काग्रेस में चले जाने के कारण वज़ीर हसन से उनकी जान बच गई थी। और अभी उन्हें खयाल आया कि स्कूल का नाम बदलकर वजीर हसन को जलील करना चाहिए। उनके दिमाग में कई नाम आए 'सुभाश मिमोरियल हायर सेकेंड्री' पर उनका जी जम गया। यदि 'ओल्डम लायब्रेरी' का नाम बदलकर सुभाश पुस्तकालय रखा जा सकता है तो 'एंगलो वर्नाकुलर' की जगह दी मुस्लिम सुभाश मेमोरियल हायर सेकेंड्री स्कूल' क्या नहीं रखा जा सकता! तो वज़ीर हसन ने उन्हें वह लतीफ़ा सुनाया कि जब ओल्डम लायब्रेरी का नाम बदला जा रहा था तो म्युनिसिपल बोर्ड के एक मेम्बर ने जलकर यह प्रस्ताव रखा कि 'कार्नवालिस टोम्ब' का नाम बदलकर सुभाश समाधी' रख

दिया जाए।

यह सुनने के बाद श्री असारी यह प्रस्ताव नही लाए। और तब वह 'हिन्दुस्तानी' की कौडी लाए। और वज़ीर हसन ने इसे झेल लने का फैसला कर लिया।

तो नाम बदल दिया गया। 'ऐंग्लो वर्नाक्युलर' की जगह 'ऐंग्लो हिन्दुस्तानी' रख दिया गया। लेकिन किसी ने यह नही सोचा कि यह 'ऐंग्लो हिन्दुस्तानी' क्या होता है।

परन्तु जब श्री असारी ने दूसरा प्रस्ताव रखा तो कयामत आ गई। प्रस्ताव यह था कि हिन्दी के पण्डित श्री गोबरधन 'बेकल' चिरैय्याकोठी की तनख्वाह बढा दी जाए। यानी उन्हें उतनी ही तनख्वाह दी जाने लगे जितनी उनके नाम चढती है।

वजीर हसन न इस प्रस्ताव का बहुत डटकर विरोध किया। सच पूछिए तो वज़ीर हसन ने इतना डटकर विरोध किया कि कमेटी के दूसरे मम्बरो को डर लगने लगा कि कही रामधनी चपरासी न सुन ले ये बातें! हालांकि वह बेचारा दफ्तर म दूर दालान के एक कोने मे बठा सुर्ती मल रहा था।

भला रामधनी को स्कूल के नाम और श्री गोबरधन 'बेकल' चिरय्याकोठी की तनख्वाह मे क्या दिलचस्पी हो सकती थी। वह ता एक खानदानी चपरासी था। उसका ताया जिलाधीश का पखा कुली था। जाडो म गाव जाकर जमींदार की चिलमे भर भरकर दिन काट आया करता था। उसका बडा भाइ सदपुर तहसील के नायब तहसीलदार का चपरासी और तहसीलदारनी की नाक का बाल था। कभी आता तो अपनी तहसीलदारनी के बडे किस्से सुनाता। नायब साहब तो गाऊ हैं। बाकी मेहरारू गजब की बाय यह कहानिया सुनते समय रामधनी को यह खयाल सताता रहता था कि 'गजब की कोई मेहरारू' आखिर उसके हिस्से मे क्यो नही आती। उसे श्री असारी की बडी लडकी शम्सुन (असली नाम शम्सुन्निसा) बडे गजब की लगती थी। शम्सुन उसस चार पाच साल बडी थी। रामधनी जब बडा नही हुआ था तो चपरासी के लडके की हैसियत से असारी साहब के घर आया जाया

करता था। से नही मालूम कि वह 'शम्सुन' और इगलिश टीचर कुवारी का लडकिया कैसे बन गया। मगर सब टाएँ टाएँ फिस हो गया। शम्सुन की शादी हो गई और कुवारी साहब की तरह वह भी टापता रह गया। अब वह अन्सारी साहब के घर भी नही जाता क्योकि वह बडा हो गया है। कुवारी को डाक्टर की जरूरत भी नही है क्योकि उन्ह मझली बेटी बुतूल का टयूशन मिला और फिर श्री अन्सारी ने कुवारी ही से बुतूल की शादी कर दी। और उनकी छोटी बेटी शहरनाज उससे बहुत छोटी है। स्कूल मे यही गलतफहमी चल रही थी कि श्री अन्सारी कुवारी को प्रिंसिपल बनाना चाहते हैं।

कहने का मतलब यह है कि रामधनी को स्कूल के झगडे म कोई दिलचस्पी नही थी। उसे शायद यह मालूम था कि देश गुलाम रहे या स्वतत्र हो जाये वह चपरासी ही रहेगा। वह तो केवल यह चाहता कि किसी लडकी का खत लिखे। चूकि उसके ख्याल मे प्रेम-पत्र उर्दू म लिखे जाते हैं (कुवारी शम्सुन खतो-किताबत उर्दू ही मे हुआ करती थी), इसलिए वह मोली साहब से कि जिनका पूरा नाम मौलवी मुहम्मद बद्रुल हसन 'वफा' फैजाबादी था, उर्दू सीख रहा था।

रामधनी का सारा समय तो उर्दू सीखने मे बीत रहा था। तो उसे भला कहा फुरसत थी कि वह कमेटी मे होनवाली तकरीरें सुनता। परन्तु कमेटी के लोगो को तो यह नही मालूम था न।

'अरे भई वजीर " श्री अन्सारी ने घबराकर कहा। उन्होने श्री वजीर हसन बोलते-बोलते पल भर के लिए रुके। उन्होने श्री असारी की तरफ बडी नफरत से देखा। बेचारे श्री असारी अपनी कुर्सी मे सिकुड गए। वजीर हसन ने मेज पर इतने जोर से हाथ मारा कि गद की चादर मे लिपटा हुआ कलमदान उछल पडा। यदि दवातो मे रोशनाई रही होती तो अवश्य फैल गई होती। परन्तु वह तो खुदा भला करे अग्रेजो का जिन्होंने फाउन्टन पन बना डाला। कलमदान तो बाप दादा की उन तस्वीरो की तरह रह गए हैं जिनम वह तलवार लगाए अकडकर बठे दिखाई देते हैं।

मैं पूछता हूँ कि बद्रुल हसन, और मास्टर अलताफ, और शेख

माहीउद्दीन, और मास्टर जब्बार और मास्टर अतहर "

वजीर हसन ने स्कूल के तमाम मास्टरों के नाम ले डाले और सवाल किया

" और यह जो प्रिंसिपल अलीमजर वगैरा हैं इन्होंने क्या कसूर किया है कि इनकी तनख्वाह न बढ़ाई जाए और गोवरधन ने कौन सा ऐसा तीर मारा है कि उनकी तनख्वाह बढ़ा दी जाए ? क्या सिर्फ इसलिए कि वह गोवरधन है तो एकदम से बड़े काबिल हो गए हैं और दूसरे मास्टर चूंकि मुसलमान हैं इसलिए चूतिए के पट्ठे हैं कि गाड मराएँ और पटाएँ।"

श्री हयातुल्लाह अंसारी ने सबकी तरफ बड़ी बेबसी से देखा और तब वह खाली कलमदान को देखते हुए बोले

"इसका तो खयाल करो वजीर, कि हमलोग एक स्कूल की वर्किंग कमेटी हैं। गाली तो न बको।"

'गाली न बकूं तो कुरआन पढ़ूं ! तुम लोगों का दोगलापन देखकर मेरी झाँट सुलग जाती है।"

वजीर ने कमेटी के मेम्बरों की तरफ बड़ी हिकारत से देखा। फिर उसने अपनी जिन्ना टोपी ओढ़ी और खड़ा हो गया

"हाई स्कूल की बत्ती बनाकर अपनी गाड में रख ल्यो हयातुल्ला। अब ई इस्कूल नहीं रह गया है। ई कोठा है जेपर हमलोगन की गरत रंडियन की तरह बैठके पेशा कर रही है। सलामालेकुम।"

वजीर हसन कमेटी के कमरे से निकल गया। कमेटी के तमाम मेम्बर सन्नाटे में आ गए।

श्री अंसारी ने थोड़ी देर बाद गला साफ करके कहना शुरू किया

'तो यह तय किया जाता है कि बाबू गोवरधन प्रसाद 'बेकल' चिरय्याकोठी की खिदमात को पेशे-नजर रखते हुए उनकी तनख्वाह में इजाफा कर दिया जाए। "

स

मैं पाच वरस से लगातार अपने आपसे पूछ रहा हू मैं कौन हू ? मेरी पहचान क्या है ? मेरी जड कहा हैं ? मुस्लिम लीगी होने का अर्थ क्या है आखिर

(वहशत असारी की डायरी)

वजीर हसन और श्री हयातुल्लाह असारी मे बडा फर्क था। श्री असारी पाकिस्तान बनवाकर पछता रहे थे और यह पछतावा उनकी आत्मा की सडी हुई दीवार मे लोने की तरह लगता ही जा रहा था।

वजीर हसन पाकिस्तान बनवाकर झल्ला रहे थे। इसलिए नही कि बलवो मे बहुत मुसलमान मारे गए। क्योंकि बलवो मे हिन्दू भी बहुत स कुछ कम नही मारे गए थे। पाकिस्तान उनके लिए कोई सियासी चाल नही था बल्कि उनका विश्वास था। उन्होंने पाकिस्तान जाने के बारे मे कभी नही सोचा। इसलिए नही कि वह श्री असारी की तरह नेशनलिस्ट हो गए थ। इसलिए भी नही कि उन्हे इसका डर नही था कि बलवे म वह भी मारे जा सकते हैं। उनकी टेक यह थी कि वह अपना घर छोड कर क्या जायें।

'मैं पैगम्बर नही हूँ कि हिजरत को फलसफा बना लू।" बडे बेटे न जब पाकिस्तान जाने की ज़िद की तो उन्होंने उसकी आखो मे आखें डाल कर यह कह दिया 'मैं एक गुनहगार आदमी हूँ और उसी सरज़मीन पर मरना चाहता हूँ जिस पर मैंने गुनाह किए हैं।"

जाहिर है कि बेचारा अली बाकर इसका क्या जवाब देता। बाप का मुँह देखता रह गया। वजीर हसन मुस्कुरा दिए और बोले 'मियां, तुम नहीं समझोगे ये बातें। वह दीनदयाल जो अब बाबू दीनदयाल हो गया है ना, और जो मुसलमानों को हर वक्त गालियां दिया करता है ना, मेरा लंगोटिया यार है। हम दोनों साथ अमरूद चुराने जाया करते थे। हम दोनों ने एक साथ कुंजड़ा की गालियां खाई हैं। जो मैं चला जाऊँगा तो उसके बिना मैं वहाँ अधूरा रहूँगा और मेरे बिना वह यहाँ। ऐसी बहुत सी बातें हैं मेरे पास जो मैं सिर्फ दीनदयाल से कह सकता हूँ और उसके पास भी ऐसी हज़ारों बातें हैं जो वह सिर्फ मुझी से कह सकता है। तो उन बातों का क्या होगा? मुस्लिम लीग हो या महासभा, वह दीनदयाल और वजीर हसन से बड़ी नहीं है। लेकिन तुम यह बातें नहीं समझ सकते क्योंकि हमें हमारे बुजुर्गों से कुछ रवायतें मिली थीं। और तुम्हें अपने बुजुर्गों से सिर्फ कुछ सियासी नारे मिले। कुसूर तुम्हारा नहीं है। कुसूर हमारा है। दीनदयाल अभी कल ही कह रहा था कि उसके बेटे ने उससे पूछा कि वह अब भी वजीर चाचा के यहाँ क्यों आता-जाता है?"

"तो क्या जवाब दिया उन्होंने?" अली बाकर ने पूछा।

"बताता हूँ। लेकिन शायद उसका जवाब भी तुम्हारी समझ में नहीं आएगा। उसने कहा—वजीर चाचा नहीं वजीर चचा? क्या समझे।" वह खिलखिलाके हँस दिए।

बात वाकई अली बाकर की समझ में नहीं आई। और इसीलिए वह पाकिस्तान चला गया। वजीर हसन ने उसे आक कर दिया। इसलिए नहीं कि वह पाकिस्तान के विरोधी हो गए थे। इसलिए भी नहीं कि हिन्दुस्तान से उन्हें प्यार हो गया था। बल्कि इसलिए कि हिन्दुस्तान उनका घर था। और घर नफरत और मुहब्बत दोनों ही से ऊँचा होता है। मुहब्बत एक बहुत छोटा शब्द है। इतना छोटा कि उसमें आँगन का एक कोना भी नहीं समा सकता। परेशानी यह है कि भाषा के पास मुहब्बत से बड़ा कोई शब्द नहीं है। इबरानी भाषा में शायद कोई शब्द हो मनुष्य और घर के सम्बन्ध की गहराई या ऊँचाई नापनेवाला। क्योंकि घर छूटने का भय केवल वही भाषा जानती है। अब पंजाबी, बंगला, असमी, उर्दू और

पहले भी तो घर रहा होगा। वज़ीर हसन की आत्मा उम्र में गाज़ीपुर से बड़ी है। तब गंगा के तट पर वह किला नहीं बना था जिसमें आज का डी० ए० वी० डिग्री कॉलेज है। तब मिलनी में अशोक की वह लाट नहीं गड़ी थी जो अब बनारस में है। तब अयोध्या के राजा दशरथ शिकार खेलने नहीं निकले थे अब तो दूरी की वजह से कुछ दिखाई भी नहीं दे रहा है। परन्तु वज़ीर हसन की आत्मा की आवाज़ आ रही है। क्षणों, दिनों महीनों और शताब्दियों का एक अटूट सिलसिला है जो इतिहास के उस पार चला गया है। चला गया है शायद ऋग्वेद की ऋचाओं में नदियों की तरह बहते और जंगलों की तरह सनसनाते और पहाड़ों की तरह गम्भीर वातावरण के पार तक! कैसी अयोध्या, कैसी काशी, और कैसा पाटलिपुत्र, तक्षशिला, वैशाली एक अकेले वज़ीर हसन की आत्मा इन सबसे पुराना है और इन सबसे बड़ी है। वज़ीर हसन की आत्मा उन टीलों में है जो गाज़ी मियाँ के रौज़े से ज़रा सा हटकर ईंधन के भट्टों के पास चुपचाप खड़े गुज़रती हुई रेल को देखा करते हैं। वज़ीर हसन को ये बातें नहीं मालूम थीं। परन्तु उन्हें यह अवश्य मालूम था कि दीनदयाल उनका लंगोटिया यार है। और उन्हें यह भी मालूम था कि न जाने क्यों वह गाज़ीपुर को छोड़ना नहीं चाहते।

और इसीलिए उस दिन वह स्कूल की वर्किंग कमेटी के जलसे से बहुत उदास आए।

उनका घर स्कूल में मिला हुआ था। नहीं! मैंने गलत कहा। स्कूल उनके घर से मिला हुआ था। स्कूल नया था। घर पुराना था। स्कूल की नयी इमारत के लिए उन्होंने वह ज़मीन दे दी थी जिस पर वह अली बाकर के लिए मकान बनवाना चाहते थे। और यह चन्दा उन्होंने उस वक्त दिया था जब उन्हें यह खयाल भी नहीं था कि अली बाकर के लिए वह एक नया मुल्क बनवानेवाले हैं। यह चन्दा उन्होंने मुस्लिम लीग की कॉनफ्रेन्स में पाकिस्तान का प्रस्ताव आने से पहले दिया था।

वह आदर्शवादी थे। और बेटा चाहे अली बाकर की तरह एकलौता ही क्यों न हो आदर्श से छोटा होता है। स्कूल उनका आदर्श था। उन्होंने

कोई मस्जिद नही बनवाई। मस्जिदो के लिए चन्दा भी वह बडी मुश्किल से दिया करते थे। जभी तो उन्होने स्कूल के लिए जब इतनी बडी जमीन चुपचाप दे डाली तो सारे शहर का मुह खुले का खुला रह गया। हद तो यह है कि बक जौनपुरी तक ने कहा कि साहब गाजीपुर मे भी एक आध दिलवाले रहते है। जहा तक मुझे याद आता है उन्होने अपनी एक मसनवी मे इसका जिक्र भी किया है। वजीर हसन ने स्कूल की इमारत को बनते यो देखा था जसे कोई सपना देखता हो या जसे माँ बच्चो को जवान होता देखती है कि दिल ही दिल म फूली नही समाती। परन्तु मुह से कुछ नही कहती कि कही नजर न लग जाय! वास्तव मे वजीर हसन के दो बटे थे। बडे बेटे का नाम था मुस्लिम ऐंग्लो वर्नाक्युलर स्कूल और छोटे बेटे का नाम था अली बाकर खा।

बडे बेटे ने अपना नाम बदल लिया!

छोटा बेटा पाकिस्तान चला गया!

वजीर हसन अपनी आत्मा की पुरानी बस्ती मे अकेले रह गए!

अकेले! यह शब्द कितना वेदद है। अकेलेपन का यह जहर उनकी रगो म दौड रहा था। वह श्री हयातुल्लाह अन्सारी नही थे कि उनकी राजनीति भी उनकी टोपी म होती। यह अपना देश भी अजीब है कि यहा राजनीति विचारो से नही पहचानी जाती, बल्कि टोपियो से पहचानी जाती है। अधिकतर लोगो के पास तो कोई विचारधारा होती ही नही —केवल टोपिया होती ह। और जिनके पास विचारधारा होती भी है, वह भी टोपिया पर ज्यादा भरोसा करते हैं। मैंने जनसघी, काग्रेसी और मुस्लिम लीगी कम्युनिस्ट देखे हैं। सवाल विचारधारा का नही, सवाल टोपिया का है और इसीलिए तो लोकसभा मे कबड्डी होती रहती है। टोपियाँ उछलती रहती हैं। आत्मा का कोई रग नही होता। टोपिया रग बिरगी होती हैं—परन्तु वजीर हसन की आत्मा रगीन थी। उनकी आत्मा का रग सब्ज था। यह सब्जी धान के खेतो की नही थी बल्कि रुके हुए गहरे पानी की थी—यह सब्जी काई की थी। और चूकि उनकी आत्मा का एक रग था, इसीलिए दीनदयाल स उनकी दोस्ती उसी तरह बनी हुई थी। अब मुलाकातें जरा कम होती थी। सन '२१-२२ से

अलगावा शुरू हो गया था। पानी मे बेसहारा बहनेवाली चीजो की तरह यह दोनो अलग होत जा रहे थे। सन् '३५ मे दोनो ने इस अलगाव को महसूस किया। सन् '४० तक बीच मे एक दीवार उठ गई, '४५ मे दोना, नदी के अलग किनारो पर थे—नदी से अलग। नदी से बेतअल्लुक! नदी के दद से आशना। दीनदयाल मुसलमानो से भल्लाए हुए थे। वजीर हसन हि दुग्रो से डरे हुए थे। भल्लाहट का रग गेरुवा हो गया और डर का रग सब्ज। परन्तु दोनो मिलते तो अपन डर या अपनी यल्लाहट की बातें नही करते।

दीनदयाल बोले "अली बाकर से कहके दरखास्त दिलवाय दियो। हम पन्तजी से कह देंगे।"

वज़ीर हसन कहत "तू खुद काहें न कहत्यो अली बाकर से कि दरखसिया दे दें। हम कउन होत हैं कहे वाले। ऊ ठहरे अल्ला रक्खे नेशनलिस्ट मुसलमान। मुस्लिम लीगी बाप की बात भला मान को है!"

"हे वज़ीर," दीनदयाल बोले, "तू हम्मे चराये की कोशिश मत करा। तू मुहम्मद अली जिन्ना ना हो कि हम तूहे जनब ना करते। तू मुस्लिम लीगी न हो सक्त्यो।"

'मुस्लिम लीग गई अपनी मा की चूत मे।" वजीर हसन ने कहा। "हम त खाली ई चाह रहें कि हि दुस्तान के मुसलमान को भी जीये का हक मिले। हम हि दुस्तान से गाड मराए को तैयार ना हैं।"

"गाड त खर तू कोई से न मरायो। अरे ऊ मोली समीउल्ला का भयजी जो तूहे बडा फुसलाए की कोशिश किहन बाकी तू पुट्ठे पर हाथ ना धरे दियो।"

पल भर के लिए दूरिया मिट गयी। वज़ीर हसन मुस्कुरा दिए। कसा पाकिस्तान और कैसा अखण्ड भारत!

"मर गया साला।"

बात खत्म हो गई। पर तु बात खत्म नही हुई थी। दीनदयाल यह सोच रहा था कि हि दुस्तानी मुसलमाना को जीने का अधिकार दिलाने के लिए पाकिस्तान बनवान की क्या जरूरत हैं।

चुनाचे दीवार फिर उठ गई। मुस्कुराहट बिजली की तरह चमकी।

पल भर के लिए उजाला करके अंधेरे को और बढा गई।

दोनों दोस्त एक चायखाने मे जा बैठे। मुस्लिम लीग की बिसात बिछी हुई थी। छुट्टियों म अलीगढ से आया हुआ वहशत पाकिस्तान पर भाषण दे रहा था।

'हिन्दुस्तानी मुसलमानों को भी जीने का उतना ही हक है '

"ए बेटा, तो हिन्दुस्तान में रहके जीये का हक मागो।" दीनदयाल ने कहा, "भाई, बात हमारी समझ में ना आली कि हिन्दुस्तानी मुसलमाना को जीये के वास्त एक ठो नये मुलुक की का जरूरत है।"

'तू लोग जीये जो ना दे रह्यो।" वजीर हसन ने कहा।

"तुहें कउन तकलीफ है ?"

"ए भाई हम का हमही हैं ? हमारे बाप दादा हम ना रहे का अउर हमारी आल औलाद हम ना रहिए का ?" वजीर हसन ने दीनदयाल की आखो मे आखें डालके पूछा "ई लौंडे को पहचान ना रह्यो का ? पदा भया रहा त एक नाम वकारुल्ला रक्खा गया रहा। अलीगढ कालिज जाके वहशत असारी हो गया।" वह वहशत की तरफ मुडे, "सुन रहे कि तू बहुत मशहूर शायर हो गए हो ?

वहशत का खयाल था कि वजीर हसन उसे नही पहचानते होंगे। इसीलिए वह धडल्ले से सिगरेट पी रहा था। परन्तु जब उसने देखा कि वह पहचान लिया गया तो उसन सिगरेटवाला हाथ मेज के अन्दर कर लिया।

वजीर हसन बोले वेटा, तू पढे लिखे हौ। तनी समझाओ इन ठाकुर दीनदयाल सिंह को जो रहमत की दुकान मे बैठे पाकिस्तान पर शक कर रहें।"

"तू समझो। दीनदयाल बोले।

"भाई, हम त ई जानते हैं कि हम पाकिस्तान को ठीक समझ रहे त बनवाए की फिकिर मे हैं। तो ई समझ रह्यो की पाकिस्तान ठीक ना है त मत बने दियो।'

बात इतनी सीधी थी।

इसीलिए वजीर हसन झल्लाए हुए थे कि दीनदयाल ने आखिर

पाकिस्तान बनने ही क्यो दिया।

वह स्कूल से निकलके अपने घर की गली मे मुडे ही थे कि श्री गोवरधन प्रसाद 'बेकल' चिरैंय्याकोठी से मुलाकात हो गई।

"तसलीमात अर्ज़ करता हूँ कवर साहब!" 'बेकल' चिरैंय्याकोठी ने झुककर सलाम करते हुए कहा।

वज़ीर हसन ने आँखें उठायी। वह मुस्कुरा दिए।

"अब तसलीमात छोडिए बाबू गोवरधन प्रसाद। तसलीमातें तो पाकिस्तान चली गयी।"

'बेकल' चिरैंय्याकोठी ने दाँत निकाल दिए और बोले

"कँवर साहब

जन्नत न कुनद चारए अफसुदगी ए दिल।

तामीर ब अन्दाज ए वीरानीए मा नीस्त।"

"अबे गोवरधन प्रसाद चूतिये हुए हो क्या! वहा कमेटी हिन्दी टीचर की तनख्वाह बढा रही है और तुम यहा खडे खडे फारसी के शेर सुना रह हो।"

"आपका बहुत बहुत शुक्रिया कँवर साहब। जो तनख्वाह मिलती थी उसमे गुज़र नही हो रहा था।"

"पाँव बहुत बडे हो गए हैं क्या?"

"पाव बडे नही हुए हैं कँवर साहब। चादर दिन ब दिन छोटी होती जा रही है। घर से कुछ आम आ गए थे। सोचा कि ड्योढी पर दे आऊँ।"

"आम की फसल तो एह साल कमजोर जना रही।"

"जी हा, फसल तो अच्छी आई थी। मगर ओलो न तबाह कर दी।"

"बिटिया की शादी-वादी कही ठीक ठाक की या नही?"

"मैं क्यों फिक्र करू कँवर साहब। अल्लाह जब चाहेगा हो जाएगी।"

ए भाई अल्लाह मियाँ अभई तक इहइँ डटे हुए हैं का? खैर छोडो। तनख्वाह बढे की मिठाई कब खिला रह्यो?"

"मैं आपका शुक्रिया किस ज़बान से अदा करूँ!"

जबान से नही बाबू गोवरधन प्रसाद जबान मे ! हयातुल्ला के घर जाके हिंदी मे उनका शुक्रिया अदा कीजिए।"

यह कहकर वह आगे बढ गए। बचारे बेरल' चिरय्याकोठी हैरान खडे रह गए कि आखिर आज कवर साहब को हा क्या गया है !

कँवर वजीर हसन खाँ को खुद यह नही मालूम था कि उन्हे क्या हो गया है। उन्ह केवल यह मालूम था कि वह भन्नाए हुए हैं।

यह बात उनकी बीवी हाजरा का भी मालूम थी। इसीलिए वह अब बहुत कम बोलती थी। कोई उसे देखता तो लगता कि वह कुछ सोच रही है। जबकि वह दिन रात अपने आपसे कवल एक सवाल किया करती थी। अली बाकर पाकिस्तान के खिलाफ था और वह पाकिस्तान मे है और यह (यह यानी वज़ीर हसन बीवियाँ खयाला मे भी मियाँ का नाम नही लेती 'यह वह किया करती हैं) पाकिस्तान बनवाने मे जी-जान स लगे हुए थे तो यह यही हैं। ऐसा क्यो है ? 'उनसे' पूछना सम्भव नही था क्योकि वह तो कोई बात करो तो काटने को दौडते हैं ! दिल ही दिल मे हाजरा अपने 'उन' से बहुत भन्नाई हुई थी। न यह मुआ पाकिस्तान बनता और न वह अपने अली बाकर से अलग होती। उसके लिए पाकिस्तान का अर्थ यह था कि वह अपने इकलौते बेटे से जुदा हो गई है। वह राजनीति नही जानती थी। वज़ीर हसन और अली बाकर दोनो ही के लाख कहने के बावजूद वह वोट देने नही गई

"नौज, मैं क्यो जाऊ गैर मदुओ को वोट देवे। ताहर लोगन को लेवे को हो त ले ल्यो !'

वज़ीर हसन जोर मारत कि वह मुस्लिम लीग को वोट दें और अली बाकर कहता कि शाकिर अली एडवोकेट को। बाप बेटे मे घण्टो बहस होती। बाप गुस्से मे चिल्लाने लगता। बेटा अपनी आवाज़ कभी ऊँची न करता। सुनता रहता और मुस्कुराता रहता। और जब बाप जी भरके बमक चुकते तो वह चुपके से कुछ बोल देता और आगन फिर बाप की चिंघाड से गूंजने लगता। पाकिस्तान नही बना था तो घर मे कैसा सनसना रहा करता था। अब तो आबेदा को भी चुप्पी लग गई है।

हाजरा ने अपनी बहू की तरफ देखा। उसका हुस्न उन्हें मैला-मैला-सा दिखाई दिया। जैसे शीशे पर महीनो की गर्द पडी हुई हो।

हाजरा अपनी बहू को बहुत चाहती थी और अपनी पोती शहला पर तो वह जान देती थी। शहला ! उसे यह नाम पसन्द नही था। वह चाहती थी कि पोती का नाम रुकय्या या कनीज फातिमा रखा जाए। परन्तु अली बाकर नये फशन का नाम रखना चाहता था। शहला ! नौज ! यह भी कोई नाम हुआ

शहला एक पलग पर लेटी हौले हौले गुनगुना रही थी

माई मेरे ननन बान परी री ॥

जा दिन नैना श्याम न देखो बिसरत नाही घरी री ॥

चित बस गई सावरी सूरत, उर तें नाही टरी री ॥

मीरां हरि के हाथ बिकानी, सरबस दे निवरी री ॥

माई मेरे नैनन बान परी री ॥

हाजरा का कलेजा धक से हो गया। शहला की आवाज मे यह दर्द कहा से आ गया ! हाजरा ने पलटकर शहला की तरफ देखा।

सोलह बरस की छोकरी बीस बरस की लग रही थी। यह लडकिया का जवान होने की इतनी जल्दी क्या होती है आखिर। हाजरा ने सोचा। और इन उथल पुथल के दिनो म तो इन्हें जवान होना ही नही चाहिए।

"माई मेरे नैनन बान परी री।" शहला गुनगुनाए चली जा रही थी। हाजरा के दिल का घाव खुल गया। उसे वह दिन याद आने लगे जब वह दिन गिना करती थी कि कब गर्मी आएगी और गर्मी के साथ वजीर आएगे। शौहर होने से पहले वजीर उसका चाचा जाद भाई था।

वह उन दिनो को याद करके शर्मा गई

माई मेरे ननन बान परी

शहला अब तक गुनगुना रही थी।

हाजरा का कलेजा धक-से हो गया। वह पढी लिखी नही थी परन्तु 'नैनन बान परी' का अर्थ जानती थी। यह उसकी अपनी भाषा थी, वह लिखना नही जानती थी। परन्तु यह भाषा बिल्कुल उसी तरह

उसकी थी जैसे हाजरा उसका नाम था, और मिट्टी की मोटी मोटी दीवारोवाला यह घर उसका घर था। घर और नाम की तरह मातृभाषा की कोई लिपि नही होती। वास्तव म तो भाषा और लिपि का सम्बन्ध कोई अटूट सम्बन्ध नही होता। लिपि तो भाषा का वस्त्र है। उसका बदन नही है—आत्मा की बात तो दूर रही। मातृभाषा की तरह कोई मात लिपि नही होती, क्योकि लिपि सीखनी पडती है और मातभाषा सीखनी नही पडती। वह तो हमारी आत्मा म होती है और हवा की तरह सास के साथ हमारे अन्दर जाती रहती है। सांस लेन की तरह हम मातभाषा भी सीखते नही। वच्चे को जस दूध-पानी आता है उसी तरह मातभाषा भी आती है। मा के दूध और मातभाषा का मजा भी शायद एक ही होता ह। परन्तु लिपि एक बाहरी चीज है। शब्द वही रहता है शब्द का अथ भी वही होता है चाह उसे जिस लिपि म लिख दिया जाए। कैसे मूख हैं यह लोग जो लिपि को भाषा से बडा मानत हैं। यह हाजरा जो गाजीपुर के मुहल्ला वरबरहना के एक पुराने घर के एक दालान म लेटी चर्खीवाला पखा झल रहा है, यह तो कोई लिपि नही जानती—तो क्या इसकी कोई मातभाषा भी नही होगी ?

माई मेरे ननन बान परी।

नैनन बान परी।

कब पडी बेटा ? किसकी नैनन बान परी बेटा ? तू तो अब जाके सोलह बरस की भई हो और तेरा बाप पाकिस्तान मे है। तू ननन बान मत खावो। क्या पता वह कब आए और तुझे ले जाए।

प्रेम और राजनीति। कसी अजीब बात है।

हाजरा न कनखियो से बहू की तरफ देखा। इस शीशे की धूल कौन साफ करेगा आखिर ? अली बाकर तो तलाक देकर अलग हो गया। सुना है वहा उसने दूसरी शादी भी कर ली। तो इस आबेदा का क्या होगा। मायकेवाले पाकिस्तान चले गए। खुदा उनको जिन्दा रक्खे परन्तु हमार बाद क्या होगा इस आबेदा का ? क्या इसकी तकदीर मे कोई भविष्य नही है ? अब तो ऐसा लगता है कि किसी की तकदीर म कोई भविष्य नही है।

हाजरा ने 'बेकल' चिरैंय्याकोठी के लाए हुए आम एक बाल्टी मे ठण्डे होने के लिए डाल दिए।

माई मेरे नैनन बान परी।

शहला गुनगुनाए चली जा रही थी। उसकी आवाज उस घड़ौंची तक भी जा रही थी जहा हाजरा अपने लिए कटोरे मे पानी उँडेल रही थी। उसकी आवाज उस पलग तक भी जा रही थी जिसपर लेटी हुई आबेदा यह सोच रही थी कि आखिर मेरा क्या कसूर है। उसकी आवाज आगन तक भी जा रही थी और उसे सुनकर वज़ीर हसन ठिठक गए।

अभी तक वज़ीर हसन के आने की खबर किसी को नही हुई थी। वज़ीर हसन बडी तल्खी से मुस्कुराए। वह अभी बेकल' चिरय्याकोठी से फारसी का एक शेर सुनकर चले आ रहे थे और घर मे उनकी पाती गवारो की ज़बान का कोई शेर गुनगुना रही थी। क्या हिन्दुस्तान मे रहन की यह कीमत देनी होगी ? और उस एक पल मे उन्हाने फैसला किया कि उन्हे दीनदयाल से नफरत है। यह जो पाकिस्तान बना है यह हिन्दुओ की एक बडी साज़िश थी। मैं तो पाकिस्तान ठीक समझता था दीनदयाल ! इसलिए मैंने उसके लिए कोशिश की। लेकिन तुम तो पाकिस्तान को गलत समझते थे ना ? फिर तुमने क्यो बनने दिया पाकिस्तान ? बताओ !

उन्हे ऐसा लगा जसे उनके अन्दर कई दीवारें गिर गयी। और उन्हे लगा जसे वह एकदम से अकेले हो गए हैं।

माई मेरे नैनन बान परी। शहला अब भी गुनगुना रही थी।

'ई आप हुआ धुपिया मे काहे को खडे हैं आखिर ?'

हाजरा की आवाज सुनकर वह चौंके। हाजरा की आवाज सुनकर शहला भी चौंकी। वह हडबडाकर उठ बैठी। हाजरा की आवाज़ सुनकर आबेदा भी चौंकी। वह खडी हो गई।

"हम खडे शहलिया की आवाज सुनते रहे।' वह शहला को हमेशा शहलिया ही कहा करते थे और यह सुनकर शहला हमेशा ठनका करती थी। हुह दादा'। परतु इस बार शहला नही ठनकी। उसका कलेजा

धक धक कर रहा था। उसका मुह लाल हो गया था।

वजीर हसन दालान म आ गए। उन्होंने शहला को लिपटा लिया। फिर वह लेट गए और बोले

"तनी हमहूँ त सुनें भाई की तू का गुनगुना रहियू।"

"गोवरधन परसाद आए रहे।" हाजरा बाली, "आम दे गए हैं।"

"हयातुल्ला किहाँ भेजवा दो।" वजीर हसन ने कहा, "ऊ बेकल चिरैंय्याकोठी की तनख्वाह बढ़वा रहें। हम आज स्कूल से अलग हो गए।"

"क्यो अलग हो गए ?" शहला ने पूछा।

"तू से का मतलब।' आबेदा ने कहा।

"ए ही से तो मतलब है दुल्हन।' वजीर हसन ने कहा, "हम ए ही के मार ता अलग हो गए हैं इस्कूल से।'

यह बात शहला की समझ म नही आई। दख बेटा, त हुआँ बइठ।' उन्होने शहला से कहा। वह पायती बैठ गई। पाकिस्तान बनवाए का मतलब ई हरगिज़ ना है कि खाली 'बेकल चिरैंय्याकोठी मास्टर हैं और अरहर, जब्बार, अली गौहर, माली नसीम वगैरा घसियारे हैं। तोरे मीराँबाई के गुनगुनाए से भी ई साबित ना होता कि बेकले मास्टर और तमाम जन घसियारे हैं।"

मीराँबाई!

यह नाम एक कटार की तरह हाजरा के दिल म उतर गया। शहला और मीराँबाई। ए ही मारे हम कहते रहे कि लडकी को स्कूल मत भेजो। बाकी हमरी सुनता कौन है। अब स्कूल त स्कूल है। अशराफ की लडकियन के साथ रहीयो जो पढ के बय्यठ जय्यहे त ओको मना करे वाला कौन है ?

हाजरा ने शहला की तरफ बडे गुस्से स दखा।

'ई मीराबाई से तोरी मुलाकात कहाँ भई ? ऐं ?' वजीर हसन खिलखिलाके हँस पडे।

ई मीराँबाई रडी ना है कि तू बमके लगियु। सकडन बरस पहले एक ठो शहज़ादी गुज़री है ए नाम की।"

"अब कल आके इ कहियो कि जद्दनवाई भी शहजादी है!"

"अरे अल्ला पाक की कसम अल्लन की मा। हम झूठ ना कह रहे। बहुत वडी शायर गुज़री है।"

"त ई मूई अपने को वाई काहे कहलवाती रही आखिर ?"

इस सवाल का जवाव वज़ीर हसन को भी नही मालूम था। वह खुद बहुत दिनो तक मीराबाई और लक्ष्मीबाई को रडी समझ चुके थे।

'दादा, हमको आप वह गज़ल मँगवा दीजिए जो उन्होने कल मुशायरे मे पढी थी।'

"बडी अच्छी गज़ल थी क्या ?"

"जी हा। भाषा तो ऐसी सरल थी मैं क्या बताऊँ ?"

"क्या चीज़, क्या थी ?"

"मेरा मतलव है ज़वान ऐसी।" वह रुक गई, 'सरल को क्या कहते हैं उर्दू मे ?"

"मैं जानता तो तुमसे पूछता क्यो ?"

शहला खिसिया गई।

"लगता है कि हमन्नोग ई उमर मे जाहिल हो गए।" वज़ीर हसन ने बडी उदासी से कहा 'ससुराल से हम्मे खत लिखियो तो महल्ले भर मे डौंडियाएँगे कि ए भाई हमारी शहलिया का खत आया है, कोई पढके सुना दे। और जो कोई पढके सुनाऊ दीहे त हम एक एक लफ्ज़ का मतलब पूछेंगे तव कही जाके हम्मे पता चलिहै कि हमारी पोती हम्म का लिक्खिस है।"

"हम आपको हिन्दी पढा देंगे।"

"पढे मे त कउनो हरज ना है। बाकी हम ई सोच रहें कि हम अपनी जबान पढ के काहें न जी सक्त अपने मुलुक मे ? हम का दीन-दयाल से कम हिन्दुस्तानी हैं। दसवी सदी मे हमहूँ हिन्दू रहे।'

"ए खुदा न करे हम काहे को होवे लगे हिन्दू!' हाजरा चमकी।

"ए मे खोदा के करे या न करे का कउन सवाल है भाई। जउन है तउन है।"

'तू एही मारे बेटे को छोड बय्यठे हो का ?"

"हम बेटे को छोडके हिम्रा ना बय्यठे हैं। बेटे साहब हम्मे छोड के हुम्रा बय्यठे हैं। जो जाए ऊ छोडता है कि जो न जाए ऊ ? मुलुक जमीदारी ना है कि सरकार कानून बनाके ले लीहे।"

शहला कुढके रह गई क्योंकि वहशत की बात राजनीति की भूल-भुलय्यों मे गुम हो गई थी। वह तो दादा को वहशत की गज़ल सुनाना चाहती थी।

जमजम या गगाजल पीकर कौन बचा है मरने से।

हम तो आँसू का यह अमृत पीके अमर हो जाएँगे ॥

आसू का अमृत! इनक्लाब जिन्दाबाद। लेके रहेंगे पाकिस्तान। नारए तक्बीर। अल्लाहो अकबर। आसू का अमृत। आसू।

वहशत ने सामने बैठी हुई मुसम्मात अकबरी बीबी को देखा

खुली हुई रगत। खडी नाक। उदास आँखें।

'आपके मेहर का दावा आपके शौहर शेख फिरासत अली पर नहीं बल्कि कस्टोडियन पर होगा।' उसने कहा।

शौहर शेख फिरासत अली हैं। दावा कस्टोडीयन पर होगा। मैंने पाकिस्तान जिन्दाबाद का नारा लगाते वक्त यह तो नही सोचा था। यह तो नही तै हुआ जिन्ना साहब कि निकाह शेख फिरासत अली से होगा और देन मेहर का दावा कस्टोडियन पर! यह कस्टोडियन कितनी बीवियो का शौहर बना हुआ है! बीविया क्या कस्टोडियन के नाम की चूडी पहनें? बच्चे क्या कस्टोडियन से ईदी मागें?

उसने फिर मुसम्मात अकबरी की तरफ देखा।

खुली हुई रगत। खडी नाक। उदास आँखें!

मुसम्मात अकबरी अपना खूट खोल रही थी।

खूट मे कुछ मुडे चिमुडे नोट थे। पहले उसने एक पाच के नोट को बाकी नोटो से अलग किया। फिर उसने अपने भाई की तरफ देखकर पाँच का एक नोट और निकाला। फिर उसने दोनो नोट वहशत की मेज पर रख दिए। और इस काम मे फारिग होकर वह फिर खूट बाँधने मे लग गई। उसके मुह मे पान था। और मुह बराबर चल रहा था। खूट बाँधकर उसने अपनी उदास आँखें उठायीं। वहशत वीरानी की गहराई

देखकर लग्ज गया।

वह बोली, "ए भय्या, मेहर त हम माफ कर दिया रहा। बाकी एक ठो बेटी है ग्रल्ला रक्खे। कस्टोडियन साहब पर दावा करो चाहे कलट्टर पर। तू हम्मे हमरा मेहरा दिलवाय द्यो। यतीम बच्ची तूहें दुग्रा दी है।"

"वह यतीम काहे को होए लगी खुदा न करे।" उसके भाई ने कहा।

"यतीमन के सिर पर सींग ना होती। जे के सिर पर बाप का साया न हो ऊ यतीमे कहा जाये। त का हमरी हशमत के सिर पर बाप का साया है?"

"हमारे लोगन के खानदान मे ग्राज तक मेहर का मोकदमा ना भया रहा।"

"हमरे लागन के खानदान मे ग्राज तक कोई पाकिस्तानो ना गया रहा।"

भाई चुप हो गया क्याकि बहन ठीक कह रही थी।

'मुंशीजी!' वहशत ने ग्रावाज दी।

मुंशी मनोहर लाल सँभलकर बैठ गए ग्रपने तख्त पर। मनोहर लाल बडे पुराने ग्रौर तजरुबाकार मुंशी थे। हजारो नजीरें उन्हें जबानी याद थी। नये वकीलो को तो वह बडी हिकारत से देखा करते थे। वह तो खानबहादुर मोलवी समीउल्लाह साहब के मुंशी थे। वकील हजरात तो उन्हें सलाम किया करते थे। परन्तु जब खानबहादुर साहब पाकिस्तान चले गए ग्रौर जाते जाते कह गए बाबू मनोहर लाल, मियां वकार का खयाल रखिएगा। तो उन्हें मियां वकार का खयाल रखना पडा। वसे वकार से वह बहुत खुश थे।

'जरा मुसम्मात ग्रकबरी बीबी का ग्रर्जी नावा लिख लीजिए।"

मुंशीजी सबके खिलाफ दावा लिखना जानते थे। परन्तु कस्टोडियन के खिलाफ दावा लिखना उन्हें नही ग्राता था। क्योंकि कस्टोडियन खानबहादुर साहब के जाने के बाद ग्राया था।

परन्तु इधर कुछ ऐसा हो रहा था कि सौ मे से नब्बे मोकदमो मे

मुद्आह कस्टोडियन होता था।

उन्होंने लिखना शुरू किया।

मनकि मुसम्मात अकबरी बीवी जौजा क़लम रुक गयी। उन्होंने वकार की तरफ बडी बेबसी से देखा।

"ज़ौजा शेख फिरासत अली लिखूं या जौजा कस्टोडियन ?" मुंशी जी ने सवाल किया।

वकार सन्नाटे मे आ गया।

"ज़ौजा शेख फिरासत अली मरहूम लिख दीजिए—!"

शेख फिरासत अली। कस्टोडियन। शेख फिरासत अली मरहूम।

मुंशीजी ने लिखना शुरू किया

मनकि मुसम्मात अकबरी बीवी जौजा शेख फिरासत अली *मरहूम* "

मुंशीजी की क़लम फिर रुक गयी। उन्होंने फिर वकार की तरफ देखा "शेख साहब की सुकूनत क्या लिखी जाएगी।"

"लिखिए।' वकार ने कहा, "मनकि मुसम्मात अकबरी बीवी ज़ौजा शेख फिरासत अली साकिना[1] मुहल्ला सय्यदवाडा थाना शहर जिला गाज़ीपुर की हूं। "

अकबरी चुपचाप सुनती रही। मुंशीजी चुपचाप लिखते रहे और वकार बोलता रहा और सोचता रहा अब सिर्फ इसी तरह के केस क्यों आते हैं। अकबरिया और फातमाएं और गफूरनें खूंट मे अपने भूत के नोट बांधे चली आ रही हैं। तांता बँधा हुआ है। कहानी एक ही है। *नाम अलग अलग हैं।*

मुसम्मात अकबरी बनाम कस्टोडियन मुसम्मात फखरुन्निसा बनाम कस्टोडियन मेरा शौहर पाकिस्तान चला गया है। मेरा बेटा पाकिस्तान चला गया है।

भगवान की तरह इस कस्टोडियन के कितने रूप हैं! आखिर हर घर में कस्टोडियन का प्रेत जमा हुआ है और वकारुल्लाह वहशत

---

१ रहनेवाली।

अंसारी, बी० ए०, एल० एल० बी० को इतनी फुरसत भी नहीं मिलती कि अपनी छोटी बहन शहरनाज़ की सहेली शहला के बारे मे सोच सके।

शहरनाज़ की सहेली शहला, शहरनाज़ ही की तरह इक्कीस साल की थी। वह सिर्फ अपनी दादी के लिए सोलह साल की थी—हाजरा के लिए तो समय उसी दिन रुक गया था जिस दिन अली बाकर पाकिस्तान गया था। और अली बाकर शहला की सोलहवीं वर्षगांठ के दो दिन बाद पाकिस्तान गया था।

पाकिस्तान। इस शब्द का अर्थ जुदाई है क्या ?

हाजरा को शहला बिल्कुल वैसी ही दिखाई देती। वर्षगांठ के अवसर पर लगाई जानेवाली मेहदी का रंग आज भी—पांच बरस बाद तक उतना ही चोखा था।

हाजरा के अन्दर होनेवाले इस परिवर्तन की खबर किसी को नहीं थी। यह कोई नहीं देख रहा था कि वह समय की कगार पर खड़ी है। और नीचे एक अँधेरी खाई है और हवा का कोई झोंका उसे नीचे गिरा सकता है।

बस, आबेदा ने एक बात देखी थी। वह जब अकेली होती हैं तो उनके होंठ या हिलते हैं जैसे वह किसी से बातें कर रही हो। और कभी वह आबेदा को यों पुकारती जैसे वह अपने बेटे को पुकारा करती थीं "ई तू अँगनवा मे खड़े का कर रह्यो एँ ?"

यह कोई तीन बरस पहले की बात है।

आबेदा ने मुड़कर इधर उधर देखा। कोई नहीं था।

'एहर ओहर का देख रह्यो।" हाजरा ने कहा, "हम तूही से बात कर रहें।"

आबेदा ने घबराकर अपनी सास की तरफ देखा। वह उसी की तरफ देख रही थी, परन्तु आबेदा कसम खाकर कह सकती थी कि हाजरा उसकी तरफ देखने के बावजूद उसकी तरफ नहीं देख रही थी। वह डर गई।

"अम्मा।"

"अम्मा-रम्मा करे से का फायदा !"

डर से आबेदा का रंग सफेद पड़ गया। उसका हलक सूख गया।

जो ठीक उसी समय शहला न आ गई होती तो जाने क्या हो गया होता।

"धूपो में तारा लक्डाना ना जय्यहे जना रहा।" उन्होंने शहला से कहा और आबेदा ने देखा कि हाजरा की आखें अपनी लम्बी यात्रा से लौट आई हैं।

फिर अक्सर ऐसा होने लगा।

परन्तु आबेदा के सिवा किसी ने इस परिवर्तन को नहीं देखा। आबेदा ने किसी से कहा भी नहीं। वह समझ गई कि हाजरा उसमें अपने बेटे अली बाक़र को देखती है।

रात के आठ बज रहे होंगे। शहला अपनी सहेली शहरनाज के साथ पिक्चर देखने गई हुई थी। वज़ीर हसन दीनदयाल के यहा शतरंज खेलने गए हुए थे। आखिर जून का धुला आसमान दूर दूर तक फला हुआ था। सितारे बहुत ज्यादा और बड़े बड़े दिखाई दे रहे थे। कहीं दूर से साप के पालने की आवाज़ आ रही थी। धीमी लालटेन तिन दरे के बिचले दर मे लटकी हुई थी।

आबेदा लेटी हुई राजनीति की समस्याओं पर विचार कर रही थी। जो पाकिस्तान ना बना होता त मोरी शहला अपने बाप के जीअते जीअत अतीम ना हो गई हाती

वह उठकर बठ गई।

फिर जब बठा न रहा गया तो वह उठी और लालटेन लेकर बाहरी कमरे की तरफ चली गई। यहाँ आगन म बिल्कुल अँधेरा हो गया।

वजीर हसन के कमरे म अधेरा था आबेदा के जाने से उजाला हो गया।

सामने ही दीवार पर मोहम्मद अली जिन्नाह की एक बहुत बड़ी तस्वीर टँगी हुई थी। पतला लम्बा चेहरा। छोटी छोटी ज़हीन आखें। पतले पतले बेदर्द होठ और वही जिन्नाह टोपी।

आबेदा उस तस्वीर के पास जाकर खड़ी हो गई। उसने लालटेन की बत्ती ज़रा बढ़ाई। फिर उसने लालटेनवाले हाथ को ऊपर उठाया जिन्नाह साहब की तस्वीर किसी और तरफ देख रही थी। " एहर काहे ना देख रह्यो मरकिनौने ! एहर देखो। बड़े कायद हौ त शहला के बाप

का रस्तवा कैसे भुलाय दियो ! ऍं ?"

ज़ाहिर है कि तस्वीर क्या बोलती।

'तै निकल हमारे घर से माटी मिले।" आबेदा की आत्मा ने किचकिचाकर कहा। परन्तु तस्वीर अपनी जगह से हिली भी नहीं।

वह लौट आई।

परंतु वह ड्योढी ही पर ठिठक गई। हाजरा किसी से बातें कर रही थी।

"वज़ीर हसन पाकिस्तान बनाए को कहते रहे। अली बाकर ओके खिलाफ रहे। त त हमन ई समझा कि जब ई पाकिस्तान माटी मिला बन गया त बतिया उलट कस गई। अली बाकर पाकिस्तान की ओर कैसे हो गए ?"

पल भर को सन्नाटा रहा और फिर हाजरा की आवाज आने लगी।

"ए भाई तूह को ना मालूम त अल्लाह मिया का बने हो। और दूसरा सवाल ई है कि हम त केहू के ओट ना दिया। हमरे कहे का मतलब ई है कि जब हम पाकिस्तान को ओट ना दिया तब हमरे वास्ते त पाकिस्तान ना बना ना ! तू सीधे से अली बाकर को लउटाय दियो नही तो चूल्हे माड मे गइ तोरी नमाज़। "

दूसरे दिन यह बात सारे शहर मे फल गई कि हाजरा पर जिनो का बादशाह आ गया है। यह किसी ने नही सोचा कि जिनो के बादशाह ने आबेदा के आईने मे अपना मुह क्यो नहीं देखा या शहला जसी चन्दन की मूर्ति को हाथ क्यो नही लगाया। हाजरा म कौन से सुर्खाब के पर लगे थे आखिर।

हमदर्दी के बहाने औरतें तमाशा देखने आने लगी और मौका निकालकर दिल की बातें पूछने लगी।

"मोरा कल्लन पाकिस्तान से अय्यहे कि ना ?"

"दुलहिन की गोदी कब भरिहे ?"

'ऊ मूई रडिअवा से मसेन के अब्बा का पिण्ड छुटिहे कि नाही ?"

'मैं जवान जहान बेटी को कब तक अगोरो आखिर। अल्लाह मियाँ एका जोडी लिखिन हैं कि नाही ?"

"अल्लाह मिया एकौ जोडी लिक्खिन है कि नाही।"

"लिक्खिन है कि नाही।"

इस एक सवाल से वजीर हसन का बडा सा आगन खचाखच भर गया।

परन्तु लगता ऐसा था कि हाजरा तक किसी की बात पहुच ही नही रही थी। वह तो अल्लाह मिया से अपनी लडाई लड रही थी।

" ई दुनिया तोहरी है कि वजीर हसन के बाप की। नाही चुप से काम ना चलिहे। तुहें बोले को पडिहे। मुह म घोघा रखके का बय्यठ गए हो। के की है ई दुनिया ? तो वजीर हसन की बात मानके काह को बना दिया पाकिस्तान ? " वह रोने लगती। और मिरासनें ढोल बजा-बजाकर गाने लगती।

कारी कामर वारे स जोडी प्रीति मैं।

लोग कहे कारी कामरिवारे, म्हारे लाख करोडी।

बेचारी मिरासनो को क्या मालूम था कि यह 'कारी कामरि' वाला मुहम्मद नही कृष्ण है। अरब का गॅडेरिया नही बल्कि हिन्दुस्तान का अहीर है।

पता यह चला कि असल चीज मुहम्मद या कृष्ण नही है बल्कि असल चीज काली कमली है।

बैठकें होती रही। झाड-फूक का काम चलता रहा। दुआ तावीज होती रही। और कहानियाँ बनती रही।

' मैं अपनी आँख स देख्यो बहिनी। हाजरा बीवी खडी रही और खुदा झूठ न बोलवाए त उनका पाँव जमीन स बित्ता भर ऊपर रहा होइहे।" नायन ने कहा।

"हम त डर के मारे भगली न हुआँ स। हमार टोकरियो हुअई रह गईल " भगिन ने कहा।

"अब मैं क्या बताऊँ शाहरू", शहला ने शाहरनाज से कहा, "घर आजकल घर थोडी रह गया है। गाजी मिया का मजार हो गया है। दादी चूकि अब भी मुझसे बातें करती है और मुझे पहचानती हैं, इसलिए मेरी इज्जत बहुत बढ गई है। एक सय्यदवाडे की शैतानी है। कल मुझसे

बाली बेटा, तनी दादी से हमरी सिफारिश कर दयो। हम कस्टाडियन पर महर का दावा किया है।'

'अकबरी हागी।' शहरनाज न कहा, 'वह तो गजब की बार है भई। भाई साहब उसके वकील ह। भाई साहब पर याद आया शहनो कि हम इधर कई महाना स साच रह थ। कल हम भाई साहब के दोस्त मुहसिन अली पर आशिक हो गए। और उन्होंने भाई साहब का समझा भी लिया है कि मुझे यहाँ सढान स क्या फायदा। अलीगढ भेज दा। अल्लाह! अलीगढ के खयाल ही स मेरी नसें टूटी जा रही हैं। मुहसिन भाई वहाँ हिस्ट्री म लेक्चरर ह।'

'आशिक हान के बाद ता मुहसिन भाई न कह मुर्दा।" शहला बोली।

"अलीगढ म ता महबूबा को आपा और आशिक का भाई ही कहा जाता है।"

'हिश्त!"

"हिश्त क्या। कल मैंने खुद सुना। भाई साहब कल मुहसिन भाई स पूछ रहे थ और वह शरीफा घोडी आजकल किसकी आपा बनी हुई है? तो मुहसिन भाई न जाने किसका नाम लिया। तो भाई साहब हसे और बाल भई वह आखिर कबतक खफीफे मे खारिज होती रहेगी? उस पोस्ट पर कोई परमानेन्ट अप्वाइन्टमन्ट क्यो नही होता!"

"उस पोस्ट पर भाई साहब का टेम्पोररी अप्वाइन्टमन्ट हो चुका है क्या?

'भाई साहब तो गजब के हीरो थे। कल राही भाई भी आ गए थे। पता चला कि कोई आबदा जैदी हैं जा अबतक भाई साहब की राह देख रही हैं। और एक तो वही शरीफा घोडी हैं। अब तक ठण्डी सासें लेती हैं। राही भाई कह रहे थे कि उनकी ठण्डी सासो की वजह से अलीगढ का मौसम बदल गया है। पिछले तीन साल से गर्मी नही पडी है और खरबूजे का फसल खराब हो रही है और खरबूजेवाले डेपुटेशन लकर आनवाले हैं भाई साहब"

दाना सहलिया खिलखिलाकर हँस पडी।

"तुम भी अलीगढ चलो ता मजा आ जाए।"

क पर ी की मात्रा

शहरनाज़ तो पढने के लिए अलीगढ चली गई। और यहा शहला अपनी पागल दादी, कुढते हुए दादा, उदास मा और सायें-सायें करते हुए घर के साथ अकेली रह गई। अब जी घबराय तो वहशत के घर भी नही जा सकती थी। क्योकि अब वहाँ जाने का कोई बहाना-वहाना नही था। वह वहा जाकर यह तो नही कह सकती थी न कि वहशत की एक झलक देखन या उसकी आवाज़ सुनने या उस पलग पर लेट जाने के लिए आई है जिस पर वहशत लेटता है।

शहला का प्यार बिलकुल पर्दे की बूबू था। वह उसे दुनिया भर के खयालो के गूदड मे छिपाकर रखती थी। बस जब आस-पास कोई न होता तो दिमाग के तमाम दरवाज़े और दरीचे खूब जमकाके बन्द करने के बाद वह गूदडी की पोटली निकालती और उसम से अपने प्यार के टुकडे अलग करती और अपनी उँगलियो से सहला सहलाकर उनकी शिकनें दूर करती।

वह उन्होने शेर पढन-पढते माथे पर आए हुए बालो को ऊपर उठाया। वह उन्हाने अन्दर आने से पहले अम्माँ को आवाज़ दी। वह उन्हाने

जब शहरनाज़ थी तो शहला को वहशत के बारे मे छोटी छोटी बातें मालूम होती रहती थी। भाई को पत्ती के काम का गरीबान बहुत पसन्द है, भाई क्योटी दाल बडे शौक से खाते हैं।'

खुद शहला को क्योटी दाल बिलकुल पसन्द नही थी। परन्तु जब उसे मालूम हुआ कि वहशत को यह दाल पसन्द है तो वह चुपचाप क्योटी दाल खाने लगी।

उसे शौक से क्योटी खाते देखकर आबेदा को बडा आश्चय हुआ।

"ई तू क्योटी कब से खाय लगियु ?" आबेदा ने पूछा।

"बडी मज़ेदार होती है अम्मा।"

बात खत्म हो गई।

'या ही धीरे धीरे उसमे बडी तबदीलिया होने लगी। उस सीने पिरोने मे चिढ थी। परन्तु अब जब देखो तब वह वज़ीर हसन के लिए पत्ती के काम का गरीबान बना रही है। उसे जसे पत्ती का काम करने का हौका हो गया था।

लेकिन वह जानती थी कि हिन्दुस्तानी जिन्दगी हिन्दी फिल्मो से बिलकुल अलग होती है। उसे मालूम था कि वह लाख पत्ती के काम के गरीबान बनाए और चाहे दोनो समय सिफ क्योटी दाल खाए, परन्तु वहशत से उसका ब्याह नहीं हो सकता क्योंकि वहशत जुलाहा है। और वह मुसलिम राजपूत खानदान की है। यह खयाल बडा दुखदाई था। जाहिर है कि वह शहरू को भी यह बातें नही बता सकती थी।

शहरनाज उसे बराबर खत लिखती रहती थी। परन्तु उसके खतो मे अलीगढ ज्यादा होता था और खुद वह बहुत कम।

' अरे शहलो, मैं तो मर गई बिलकुल डाक्टर इर्फान हबीब पर। मुहसिन भाई तो उनके सामने बस यांही हैं। मगर वह आख उठाकर देखते ही नही किसी की तरफ। उन्हे तो बस कम्युनिस्ट पार्टी, हिस्ट्री और सायरा आपा से इश्क है—

कल तो मैं मारे शम के मर गई। मैंने तुम्हे बताया था ना कि यहा माशूकाओ को आपा और आशिको को भाई कहते है। तो एक हैं मेरी सीनियर रूम-पाटनर महलका। नाम स धोखा न खाना। बडी बदसूरत हैं यह खातून। मगर गजब की कुटनी है। किसी का प्यार परता नहो देख सकती। भली शक्ल-सूरत की लडकियो से तो बर है भूतनी को। मुहसिन भाई की क्लासफेलो रह चुकी है। सुना है कि उन पर

पलट भी थी। तो मुहसिन भाई ने मुझे उसके हवाले कर रखा है और मेरी जान जीक मे है। इधर कुछ दिनो से वह एक जूनियर लेक्चरर के साथ देखी जाने लगी तो न्यू होस्टल का माथा ठनका कि जरूर दाल मे कुछ काला है! वह महलका आपा को आपा कहता है। तो एक दिन जब वह मुझे नसीहत कर रही थी कि देखो शहलो इन भाइयो के चक्कर मे न पडो, यह डिगरी लेकर चले जाते हैं तो मैं जल गई और मैंने कहा, आप भी तो आपा बनी हुई हैं हैदर साहब की। वह यह सुनकर हक्का बक्का रह गयी और खिलखिलाके हँसने लगी और बोली अरे पगली वह अलीगढ आकर मेरा भाई नही हुआ है। वह मेरा सबसे छोटा भाई है। अब यह तो बडी मुश्किल है ना शहलो! भाइयो और आपाओ के इस जगल मे कोई डालडा भाइयो और देसी भाइयो म फर्क कैसे करे आखिर!

" कल तो बडा गजब हो गया शहलो। उस्ताद लिताफत अली का गाना हो रहा था। मुजतबा भाई मेरे पास बठे थे और समझाते जा रहे थे कि उस्ताद क्या गा रहे हैं। यह मुजतबा भाई बडे गजब के लोग हैं। कोई सात आठ साल से एम० ए० म रुके हुए हैं। इम्तिहान ही नही देते। मगर हैं बडे काबिल। मेरा हाथ छुल गया। मैं तो झन् से हो गई शहलो! '

भला शहला को इन बातो मे क्या दिलचस्पी हो सकती थी। होगी कोइ महलका और होगे कोई मुजतबा भाई। हाँ, वह यह जरूर सोचने लगती कि वहाँ पढाई ज्यादा होती है या इश्क!

उसने इसमत चुगताई का उपन्यास 'टेढी लकीर' फिर पढ डाला। उस उपन्यास मे भी लिखाई-पढाई की बात नही थी। हा, यह जरूर था कि लडकिया लडकियो पर मिटी जा रही हैं। कुढ रही हैं कमबख्तें। जल रही हैं एक दूसरे से। घुसी जा रही हैं एक दूसरे के बिस्तरा मे। नखरे कर रही है।

और तब एक दिन खबर आई कि

भई अल्ला शहलो, भाई साहब ने तो नाक मे दम कर दिया है। हर खत मे यही लिखते हैं कि पता चलाओ कि वजीर चा के कुरतो के

गरेबान कौन बनाता है। देख शहला की बच्ची, मेरा एक ही भाई है। जो तूने उसका दिल विल तोड़ा तो मुझसे बुरा कोई न होगा।'

शहला यह खत पढ़ते वक्त अपने कमरे मे अकेली थी, फिर भी शरमा गई। उसके लिए अपने कमरे की दीवारो की तरफ देखना मुश्किल हो गया। वह मुह छिपाकर भागी अपन कमरे से।

दालान म लेटी हुई हाजरा अल्लाह मियाँ से बहस कर रही थी

'नही आपको ई बताए की पडिहैं कि आप बड है कि वज़ीर हसन ? का हम जि दगी भर एही मारे नमाज़ रोज़ा किया रहा कि तू हमरे अल्लन को भट पाकिस्तान भेज दिओ। बाहार जाय इ पाकिस्तान "

हाजरा रोने लगी।

"हम पाकिस्तान बनावे पर वज़ीर हसन को माफ करे वाल ना है। "

"दादी।" शहला ने हाजरा को आवाज़ दी।

हाजरा ने मुड़कर उसको देखा।

'त कब आ गई पाकिस्तान से ?" हाजरा ने सवाल किया। "अल्लन ना आए तोर साथ ? ए बहिनी ऊ सठिया गए हैं का कि जुआन जहान लडकी को अकेला भेज दिहीन और इहो ना सोचिन कि मार बलवा हो रहा है ?"

इतना कहकर हाजरा फिर अल्लाह मिया की तरफ मुड गई

"देख्यो अपने वज़ीर हसन की करनी का फल। हई शहलिया की जवानी डौंडिया रही ना। एके बदठे की जगह है कही तोरी दुनिया म ?'

शहला दादी और अल्लाह मिया मे बीच-बचाव करवाने की मूड मे नही थी। उसे पाकिस्तान के बारे मे सोचने की जरूरत भी नही थी। क्योकि जब पाकिस्तान बना था तब वह बहुत छोटी थी। उसने होश सँभाला ता पाकिस्तान बन चुका था। बलवे ब द हो चुके थे। सिंधियो और पजाबियो की दूकानें खुल चुकी थी। और हि दी सरकारी भाषा बन चुकी थी। उस उस उथल पुथल का अनुभव नही था जो चुस्त पाजामे की तरह पाकिस्तान की पिंडलियो म फँसा हुआ था। उसके लिए

पाकिस्तान एक मुल्क था। मुसलमानो का एक मुल्क। जैसे मिस्र एक मुल्क है। सूडान एक मुल्क है। अरब एक मुल्क है। अली बाकर उसे याद आता था क्योंकि जब अली बाकर गया तो वह सोलह साल की थी। परन्तु उसकी एक दोस्त पद्मा का बाप नरोबी मे काम करता था। उसकी एक और सहेली आयशा का बाप कुवैत म नौकरी करता था। फर्क सिर्फ यह था कि उसके बाप की तरह पद्मा और आयशा के बापो न अपनी बीवियो को तलाक नही दी थी। तो इससे भी क्या होता है। रफीक मामू ने भी दुल्हन खाला को तलाक दी है। तो वह पाकिस्तान के बारे मे क्या सोचे। हाँ, जब क्लास की लडकियाँ औरंगजेब को बुरा-भला कहतीं या मुसलमानो को पाकिस्तान का जासूस बताती तब अलबत्ता उसे गुस्सा आता। वह हत्थे से उखड जाती और कलमी आमो से लेकर ताजमहल तक की कहानी सुना डालती और बडे ठस्से से सवाल करती

"अच्छा तो पद्मा रानी यह बताओ कि यह जायसी, कुतबन, ताज, रहीम, उस्मान वगैरा किस खेत की मूली हैं? और कबीर को कब गिरफ्तार करेगी तुम्हारी सरकार?"

बस यही से दूसरा झगडा शुरू हो जाता। पद्मा का कहना था कि रसखान और कबीर तो हिन्दू थे। और तब वह कहती

"हिन्दू तो हम भी थे पद्मा!"

यह बात पद्मा को हमेशा लाजवाब कर दिया करती थी। चुनाचे वह घर जाकर अपने चाचा दीनदयाल से उलझ जाती।

'जब मुसलमान लोग पाकिस्तान बनवाय लिहिन हैं तो जाते क्यो नहीं। यह मलेच्छ कब तक हमारे इस देश को भ्रष्ट करते रहेगे?'

यह सवाल वह कभी अपने पिता राम अवतार से न करती। क्योंकि राम अवतार धार्मिक आदमी था। सारे घरवाले उसका मज़ाक उडाया करते थे। वह चीज़ें दबाकर दाम बढाने की कला नही जानता था। उसे अपने राम ही को रखने की जगह नही मिलती थी तो शक्कर की बोरियाँ कहाँ रखता! नतीजे मे वह आढत से उठा दिया गया। और जब वह आढ़त से उठा दिया गया तो बिलकुल ही खाली हो गया, वह हर वक्त तुलसी या सूर को गुनगुनाया करता था। परन्तु तुलसी या सूर

उसकी पत्नी की साड़ी या चड़िया या करधनी तो नहीं बन सकते थे न !
जेठानी जो पहना देती उसे पहनना पड़ता। वह पहन भी लेती। कभी शिकायत भी न करती। परन्तु दिन रात कुढ़ा करती और इसी कुढ़न में एक रात वह मर गई।

तो भला ऐसे राम अवतार से क्या क्या पूछती कि मुसलमान पाकिस्तान क्यों नहीं जाते। राम अवतार को तो शायद पूरा ज्ञान भी नहीं था कि पाकिस्तान बन चुका है।

उन्हीं दिनों म्युनिसिपलिटी के चुनाव आ गए। दीनदयाल चेयरमन बनना चाहते थे। उन्हें पक्का यकीन भी था कि कांग्रेस का टिकट उन्हीं को मिलेगा। परन्तु जब कांग्रेस का टिकट श्री हयातुल्ला अंसारी को मिल गया तो दीनदयाल का खून खौलने लगा। और या गाज़ीपुर नगर के इतिहास में पहली बार जनसंघ चुनाव के मैदान में आई। अब आप जानिए कि चुनाव में तो क्या-क्या नहीं करना पड़ता ! ज़रूरत पर दाम का ख़याल कौन करता है ! चुनांचे जिस दीनदयाल ने आज तक किसी के सामने हाथ नहीं फैलाया था उसी दीनदयाल को वोटों के लिए हाथ फैलाना पड़ा। हयातुल्ला को हराने की एक ही सूरत थी कि पाकिस्तान बनवाने की सारी ज़िम्मेदारी उन्हीं के सर पर थोप दी जाए।

चुनाव वुनाव तो ठीक। परन्तु नागरिक जीवन में एक तनाव ज़रूर आ गया।

'तू शहर के सारे मुसलमान को कटवाय पर लग हो का ?" वज़ीर हसन ने पूछा।

'तोरा मतलब का ई है कि मुसलमान के मारे हम एलक्शन ना लड़ें !"

'एलक्शन जाय अपनी माँ की चूत में।" वज़ीर हसन बिगड़ गए।

"त ई बता कि हम ओटर ना हैं ? त हम से काहे न माँग रहा ओट !'

'हम्म मालुम है कि तू वेको वोट दीहो वज़ीर हसन।"

'अल्लाह पाक का कसम दीन, हम हयातुल्ला चूतिय को ओट देवे वाले ना रहे। बाकी आज से हम उन्हीं का काम करेंगे।"

"उनका वाम करके हमरी कंठो छांट टेढी कर ली हो तू ! जाके मरावो अपनी इस्लामी गाड हयातुल्ला से ।"

दानो दोस्तो मे पहली वार यह बातें हुइ और यह तै हो गया कि दोनो के रास्त अलग हैं। ता वजार हसन ने ट्रम्प का इक्का चल दिया। वह सीधे राम अवतार के घर गए। (तव दोनो भाई साथ ही रहा करत थे।) और उसी दिन राम अवतार न श्री असारी के चुनाव की एक मीटिंग मे भाषण दिया

'प्यार भाइयो और वहना। मैं भैय्या का विरोध कर रहा हूँ। अकवर बादशाह और राणा प्रताप हिया के ना रहें। औरगजेवो ससुर गाज़ीपूर के ना रहे। शिवाह्जी कानी कहा के रहे। वाकी ई श्री हया तुल्ला हियेंई गाजीपूर के हैं। और ई शहर म उनके बाप दादा हमरे बाप दादा स पहिले आए रह। एह मारे प्यारे भाई-वहनो, हमरा वोट श्री असारी के वास्ते है '

चुनाव का नतीजा क्या हुआ इससे हम गरज नही। परन्तु यह जान लेना हमारे लिए ज़रूरी है कि दीनदयाल ने उसी दिन राम अवतार को घर म निकाल दिया।

पद्मा वही दीनदयाल के साथ रह गई। उसे अपने वाप से कोई दिलचस्पी भी नही थी। क्योंकि वह प्रेम की बात करता था और सूर को गुनगुनाता था जबकि इन दोना ही का फैशन उठ चुका था।

कुछ दिनो क बाद दीनदयाल नम पडे तो राम अवतार फिर घर मे आन जान लगा। वह पद्मा को देखने आया करता था, परन्तु आम तौर से पद्मा ही नही मिलती थी। तो माभी से दो-चार वातें करके वह फिर मन्दिर चला जाता।

बीबी क कटर म एक मन्दिर न मालूम कब से खडा ऊँघ रहा था। मुसलमानो का मुहल्ला था और वहा किसी को यह याद नही था कि उस मन्दिर मे कब कोई पुजारी देखा गया था।

शहर के दूसर तमाम मन्दिरो पर किसी न किसी का कब्जा था। एक यही मन्दिर बचा था। क्योंकि यह मुसलमाना के मुहल्ले म था।

तो राम अवतार ने उसी मन्दिर मे अपना अड्डा जमाया।

एक दिन सवेरे सवेरे शख की आवाज सुनकर सारा बीबी का कटरा चौंक पडा। उस सुबह को मस्जिद मे हमेशा से ज्यादा मुसलमान इकट्ठा हुए। कई तो ऐसे थे जिन्हें कलमा भी अच्छी तरह याद न रहा होगा। बेचारे हाफिजजी सख्त हैरान कि आखिर मामला क्या है। हाफिजजी बेचारे पिट बहरे थे, इसलिए उन्होने शख की आवाज सुनी ही नही थी।

नौजवानो के तेवर बहुत बिगडे हुए थ।

"इस मुहल्ले मे शख नही बज सकता।" नमाजियो ने यह फसला किया और तब यह मुसलमान निकले लीडरो की तलाश मे।

मोलवी अशरफुल्ला वकील।

पाकिस्तान गए।

हकीम मुहम्मद वलीउद्दी 'वफा'।

पाकिस्तान गए।

समी उल्ला खाँ ठेकेदार।

पाकिस्तान गए।

पहलवान अब्दुल गफ्फार।

पाकिस्तान गए।

मीर बुलाकी 'नाशाद'।

पाकिस्तान गए।

अब्दुरब अत्तार।

पाकिस्तान गए।

हयातुल्ला असारी।

मर गए।

तो फिर यहा गाजीपुर मे कौन है? सही कि मस्जिद है। बडा इमामबाडा है। ईदगाह है। परन्तु इनके पास कौन जाता है अब रास्ता पूछने?

जब कोई न मिला तो सय्यदवाडा, काजीटोला सराय नखास, लगाह, बरबरहना, शुजावलपुर, रजदेपुर और जूडन शहीद के मुसलमानो की भल्लाहट और दूसरे मुहल्लो म रहनेवाले मुसलमानो का डर और

बड गया। धीरे धीरे दूकानें बन्द हो गयी। दीनदयाल घाइन लगा कि यदि मुसलमानो न ज्यादा चें-पें की ता उनकी इट स इट बज जाएगी। फ्नीही खानदान के एक मालवी नारए-तक्बीर बोलकर घर स निकल आए और शहर क मुसलमानो का एतिहासिक आँकडे याद दिलान लग

'बिरदाराने इस्लाम[1] यह लोग जो अक्सरीयत के नशे में चूर हैं इन्हें न अपनी तारीख याद है और न हमारी। हम वह हैं जिन्होने जनरल तारिक रहमतुल्ला अलैह[1] के साथ बढ़के रोम म झाडे डाल दिए थे, हम वही कासिम हैं, जिसने दो हजार आदमियो के साथ इनके गुरमामा के छक्के छुडाकर सिंघ पर सब्ज अलम गाड दिया था। यह और हमे न पहचानें! हम महमूद गजनवी हैं। और दूर क्या जाइए! क्या गाजीपुर वाले यह दिन भूल गए जब सय्यद मसऊद गाजी रहमतुल्ला अलैह न बारह सौ सवारो के साथ गगा पार करके इस गाजीपुर के राजा गाद का सर कुचल दिया था। हम उन्ही मसऊद गाजी की औलाद हैं'

परन्तु मसऊद गाजी की औलाद इस झगडे मे अलग थी। और यह भाषण देनेवाला आदमी मसऊद गाजी की औलाद का कहा नही मान रहा था।

शहर के मुसलमान जेहाद के लिए सर से कफन बाँधने लगे। हिन्दू अलग तैयार हो गए कि मियाँ लोगन की तो ऐसी-की-तसी। राम अवतार देखते ही-देखत वास्तव म राम अवतार हो गया।

परन्तु राम अवतार इस झगडे से बहुत दुखी था। शाम की पूजा के समय हिन्दू नौजवानो का एक जत्था दीनदयाल के साथ बीबी के कटरे के उस छोटे से मंदिर में पहुच गया, जिसम साठ-सत्तर साल से पूजा नहीं हुई थी। चूंकि शहर म दफा चव्वालीस लगी हुई थी। इसलिए पुजारी इक्का-दुक्का आए।

राम अवतार सन्नाटे म हो गया। वह अपने भगवान को दूध से स्नान करवाता था। और खून स नहलाना नहीं चाहता था।

---

[1] उन पर खुदा की रहमत हो।

"शख मे प्रभु नही है भैय्या। प्रभु राम रोम म हैं। शख तो पुजारियो को बुलाने के लिए बजाते हैं। पूजा करनेवाले आ गए हैं तो शख बजाने की क्या जरूरत है!"

"देख राम अवतार, हम कह रहे हैं कि वजा शख। हम कह रहे हैं! शख फूक मादरचोद।"

यहा तो यह खचातानी हो रही थी और वहा वजीर हुसन के घर मे लोग वजीर हसन पर दबाव डाल रहे थे।

मदिर का इतिहास यह है कि उसे वजीर हसन के बुजुर्गों मे से किसी ने बनवाया था। यह उन दिनो की बात है जब यह लोग मुसलमान नही हुए थे।

उदयभान सिंह और जयपाल सिंह दो भाई थे। उदयभान बडा था और जयपाल छोटा। उदयभान मुसलमान हो गया। परन्तु उसने उस मदिर का चार्ज जयपाल को नही दिया, क्योकि मदिर उसकी हवेली के अन्दर था और हवेली उदयभान को मिली थी। जयपाल सिंह ने दावा किया कि उदयभान सिंह मुसलमान हो गया है, इसलिए मन्दिरवाली हवेली उसके हवाले की जाय। परन्तु उदयभान सिंह नही माने। बोले, 'मुसलमान हो जाने से क्या होता है। राजपूत हूँ। कौल देता हू कि मेरी आल औलाद इस मन्दिर की देखभाल करेगी।' और तभी से उस मन्दिर की देख भाल उदयभान सिंह की औलाद करती चली आ रही है। जयपाल सिंह की औलाद ने बडा जोर मारा कि मन्दिर उन्हे मिल जाये। ब्रिटिश युग मे मुकदमा भी लडा गया, परन्तु मदिर हवेली के अन्दर था। जयपाल सिंह की औलाद हार गई। और उदयभान सिंह यानी अब्दुल्लाह खाँ का कब्ज़ा उस मन्दिर पर कायम रहा। उदयभान सिंह ने मरते समय वसीयत की कि उस मदिर की देखभाल होती रहे। और जब वजीर हसन के परदादा ने अपनी जायदाद का वक्फअललाह बनाया तो यह शर्त डाल दी कि मुतवल्ली इस मन्दिर की देखभाल करेगा और पुजारी की तनख्वाह वक्फ मे दी जाती रहेगी।

चूकि हवेली मे एक बुतकदा था, इसलिए ठाकुर अमीर हसन खा (वजीर हसन के परदादा) ने उस हवेली मे रहना तक कर दिया और

वह मकान बनवाया जिसमे ठाकुर वज़ीर हसन खाँ रहते हैं। हवेली खाला हुई तो चारदीवारी गिरी। फिर गरीब लोगो ने रहने की इजाजत ले ली और यो जो कभी एक हवेली थी, वह बीबी का कटरा हो गया। जायदाद पर हक कायम रखने के लिए रहनेवालो से किराया लिया जाता था। सबसे ज्यादा किराया दीनदयाल देता था—तीन रुपय। और सबसे कम किराया कल्लू हज्जाम देता था—एक पैसा। ये किराएनामे कोई पचास बरस पुराने थे। दीनदयाल वगैरा अब वहाँ रहते नही थे, परन्तु उन्होंने कब्ज़ा नही छोडा था। हवेली के हिस्से मे अब उनका गोदाम था।

कहने का मतलब यह है कि सरकारी कागजात मे मन्दिर हवेली के अन्दर था हालांकि खुद अब वह हवेली जमीन पर नही थी। और शहर वाले जिसे बीबी का कटरा कहने लगे थे, वह पुलिस के नक्शे और म्युनिसिपलिटी के रजिस्टरो मे बीबी की हवेली लिखी हुई थी।

" देखिए कँवर साहब", फसीही मोलवी कह रहा था, "डरने की भी कोई हद होती है।'

परन्तु वज़ीर हसन कुछ देखने पर तैयार नही थे, 'हम ऊ मन्दिर के मोतवल्ली हैं। हम हर साल ओकी मरम्मत कराते हैं। पुजारी साला चाहे अपनी माँ चोदावे बाकी हम हर साल उसकी तनख्वाह देते हैं।"

'यह आप नही बोल रहे हैं कँवर साहब। आपका खौफ बोल रहा है।" मौलाना ने कहा। वज़ीर हसन के चेहरे का रग बदल गया। कमरे मे सन्नाटा छा गया।

वज़ीर हसन मुस्कुराए

'अब हम आपकी तरह जनरल तारिक या मुहम्मद बिन कासिम के साथ तो रहे ना कि हम्मे उनके लशकर की गिनती याद होय। बाकी कोई माई का लाल ई नही कह सकता कि ठाकुर वज़ीर हसन खाँ बुज-दिल हैं। अरे जब हम ई मन्दिर के वास्ते अल्लाह मियाँ से ना डराने तो दीनदयाल या आपकी क्या हैसीयत है! ऊ मन्दिर हमरे घर मे है और हम कह रहे कि पूजा होगी।" वह खडे हो गए, "आप लोग तशरीफ ले जाइए।'

वह लोगा के जाने की राह देखे विना अन्दर चले गए।

अन्दर हाजरा और अल्लाह मिया की तकरार हो रही थी और हाजरा ने शहला को मुंसिफ बना रखा था और वह बेचारी दम मार प्राजिक्यूशन की बहस सुन रही थी

'हम नही मानते तुम्ह। तू वजीर हसन से मिलके पाकिस्तान बनवाए हो। केह मारे कि हाजरा अल्लन स छूट जाए " हाजरा चुप हो गई। और फिर वह शहला की तरफ मुडी और बोली "अब तू ही फँसला कर दयो बीया हमरे और अल्लाह मिया के बीच। का इह पाकिस्तान बनाए को चाहत रहा ?"

शहला ने अल्लाह मिया के खिलाफ फँसला किया। उसके इस फँसले का राजनीति म कोई नाता नही था। यह एक बिलकुल घरेलू फँसला था। परन्तु आगन के अँधेरे मे खडे हुए वजीर हसन के लिए यह फँसला बहुत महत्त्वपूण था। उनकी गरदन झुक गई। वह मुडे और फिर बाहर चले गए।

उनके कमरे मे कायदे आजम की तस्वीर उसी तरह टँगी हुई थी। उस तस्वीर ने वजीर हसन की परेशानी म शरीक होने से इन्कार कर दिया।

वजीर हसन थोडी देर तक उस तस्वीर के सामने खडे रहे। उन्हें अपनी की हुई तमाम तकरीरें और अल्लन से होनेवाली तमाम बहसें और दीनदयाल के साथ खेले हुए तमाम खेल याद आ रहे थे। वह उन खेलो स आँखें नही मिला पा रहे थे।—उन्होने हाथ बढाकर वह तस्वीर उतारी और दीवार पर पड जानेवाले उस दाग को देखने लगे जो तस्वीर के कारण दीवार पर पडा था और अब तक तस्वीर ही से छिपा हुआ था। सारी दीवार का रग कुछ और कह रहा था—तस्वीर ने एक ही रग के दो बना दिए थ। क्या यह रग एक हो सकेगा ? वजीर हसन के पास इस भयानक सवाल का कोई जवाब नहीं था। वह घबरा कर तस्वीर को हाथो म लिये कमरे से निकल ही थे कि पुलिस आ गई।

जिलाधीश को यह खबर मिली थी कि कँवर वजीर हसन खा के यहाँ मारवाडी टोले को लूटने और गजानन्दजी की दूकान म आग लगान

की साजिश हो रही है।

चुनांचे वज़ीर हसन गिरफ्तार कर लिये गय।

वह रात शहला पर बहुत भारी गुज़री। क्योंकि वातावरण मे एक खौफनाक सन्नाटा, पर फड़फड़ा रहा था। घर मे कोई और मर्द था नहीं। और हाजरा अल्लाह मिया से उलझी हुई थी। आखिर रात के कोई दो बजे शहला उठ बैठी। आबेदा की आख खुल गई।

"कहा जा रहियु ?"

"दीनदयाल दादा के पास जा रहे हैं।

'तू इक्दम्मे से पगला गई हो का धिया ? ई कौनो बखत है नवा-पूरे जायेका ?" आबेदा ने घुड़का।

"हमरे जमाने मे लोग कलकत्ता, बम्बई जाते रहे।" हाजरा की आवाज आई, "ई पाकिस्तान वोहारगवा आ गवा कानी कहा से। अब जेत्तो देखो ऊह पाकिस्तान मे है। त ई त तोरी बइमानी की बात है ना। कलकत्ता बम्बई को का इ बुरा न लगता हाइहैं कि सब जने पाकिस्ताने चले जा रह हैं "

"चुप रहिए अम्मा।" आबेदा पहली बार अपनी सास से झल्लाई, "कुछ खबरो है आपको ? अब्बा को झाड़ू मारे सिपाहिया सब जेहल ले गए। '

सास बहू मे तकरार शुरू हो गई।

और अभी यह तकरार ठीक से खत्म नहीं हो सकी थी कि वज़ीर हसन आ गए। मालूम हुआ कि दीनदयाल ने जमानत ले ली। और उन्हें दीनदयाल ही से यह मालूम हुआ कि राम अवतार ने शख, मन्दिर के कुएँ मे फेंक दिया। इस पर हिन्दू नौजवान खफा हो गए और उन्होंने राम अवतार की ठोकाई लगा दी और यह कि वह अब अस्पताल मे है।

न दीनदयाल ने यह बताया कि उसे उनकी गिरफ्तारी की खबर कैसे मिली और न वज़ीर हसन ने पूछा।

दीनदयाल चले गए। वज़ीर हसन अन्दर नही आए। आबेदा सदका लिये लिये ऊँघ गई। वह बाहर अपने कमरे मे टहलते रहे और उस दीवार की तरफ देखते रहे जिस पर अब जिन्ना साहब की तस्वीर नही थी।

उनकी आत्मा मे एक तूफान आया हुआ था। उन्होंने उस दीवार को घूरा जिस पर कायदे-आज़म की तस्वीर थी मुस्लिम लीग गई अपनी माँ की चून म। हम अली बाकर ना हैं। हम वजीर हसन हैं। वक्फ-अल्लाह के मोतवल्ली।

वह दब पाँव घर स बाहर निकल।

मन्दिर के चारा तरफ पहरा था। पी० ए० सी० के जवान टाँगें फैलाए सो रह थे। मन्दिर भी गहरी नींद म था।

उन्होंने कुएँ की डोर अन्दर गिराई। फिर उन्हाने गरारी के रोड म गिरह लगाकर गिरह का देखा। और फिर वह 'या अली' कहकर अँधेर कुएँ म उतरने लगे।

अपनी जवानी म वह बड़े अच्छे तैराक हुआ करते थे। परन्तु अब वह अट्ठावन साल के थे और कुएँ का पानी बहुत ठण्डा था। वह डुबकी लगाते और निकल आते। कोई आठवी या नवी डुबकी मे उन्होंने गल निकाल लिया।

उनके बूढे बाजुआ म दद हो रहा था। साँस बहुत तज़ चल रही थी। सीन म सास की गाठें सी पड रही थी। उन्होंने ऊपर देखा। हजारा लाखो मील दूर सितारे चमक रह थे और बस। हर तरफ घना-अँधेरा था।

जो कुआँ पुराना न रहा होता तो शायद वह निकल ही न पाते। जगह जगह इट गल गई थी और पाव जमाने की जगह निकल आई थी।

ऊपर आकर वह बसुध होकर पड गए। जगत की ठण्डक उनके जोड जोड पर प्यार स हाथ फेरने लगी।

साँस ठीक हो जाने के बाद वह उठे और मन्दिर म चले गए।

मन्दिर मे एक दिया जल रहा था। वजीर हसन ने महसूस किया कि हिन्दुस्तान का इतिहास और उसका भविष्य दानो ही मन्दिर म खडे उन्हें गौर से दख रह है।

सुबह होने ही वाली थी। उन्हाने वही सुबह की नमाज पढी। नमाज खत्म करके उन्होने दुआ के लिए हाथ उठा दिए

"पाक परवरदिगार! मरे गुनाहा को माफ कर द। एहतेसाम

सेरातल मुस्तकीम। सेरातल लज़ीना। भन भम्ता भलहिम गैरिल मग-दूब भलहिम वलद्दालीन। " कुरआन का एक टुकडा। अब हमें सीधे रास्ते पर चला। उनके रास्ते पर जिन पर तेरी नेमतें उतरी न कि उनके रास्ते पर कि जो गुमराह हैं और जिन पर तेरा ग़ज़ब उतरा है।

सलाम फेरकर वह उठे।

उन्होंने बाहर की तरफ देखा। पी० ए० सी० के सिपाही अब तक सो रहे थे। उन्होंने मूर्ति की तरफ देखा और फिर वह शख फूकने लगे

दूसरे दिन के समाचार-पत्रों में यह समाचार निकला कि मन्दिर की मूर्ति को तोडने की कोशिश करता हुआ एक मुसलमान पी० ए० सी० की गोली से मारा गया। शहर और आस-पास के गावो मे दगा हो गया। तीस आदमी मारे गए। दो सौ अस्पताल मे हैं। लूट-मार की वारदातें भी हो रही हैं। शहर म कर्फ्यू लगा दिया गया है। बनारस, मिरजापुर, बलिया, जौनपुर और आजमगढ के वातावरण म तनाव महसूस कर अधिकारियो न हफ्ते-भर के लिए दफा चव्वालीस लगा दी है।

ज़ाहिर है समाचार-पत्रो न यह समाचार नही दिया कि शहला की सहेली शहरनाज़ उसी रात अक्तूबर की छुट्टियाँ गुज़ारने ग़ाज़ीपुर आई।

समाचार-पत्रो न यह भी नही लिखा कि उस रात वहशत अन्सारी ने अपनी डायरी मे क्या लिखा।

वहशत ने साहिर लुधियानवी का एक शेर लिखा

अभी न छेड मुहब्बत के गीत ऐ मुतरिब।
अभी हयात का माहौल खुशगवार नही॥

समाचार पत्रो न यह भी नही लिखा कि वज़ीर हसन की मौत की खबर सुनकर दीनदयाल ने कहा हम ई नही मान सकते वज़ीर हसन क बारे मे।

अब जब बलवा खत्म हो गया और कर्फ्यू उठ गया तो लोग उस शख के दर्शन के लिए आने लगे जो खुद ब खुद कुएँ से निकला और जब उसने देखा कि एक मलेच्छ मूर्ति को तोड रहा है तो वह खुद-ब-खुद बजने लगा कि पी० ए० सी० के जवान जाग जाएँ।

चुनाचे एक बडी सभा मे यह त किया गया कि वहाँ एक ग्रालीशान मन्दिर बनवाया जाये। मन्दिर के लिए दस हजार तो वही इकट्ठा हो गये।

ग्रौर यो शहला पहली बार वहशत के घर वहशत से मिलने गई, क्योकि ठाकुर कँवर वज़ीर हसन खाँ के मरने के बाद वह वक्फ की मोतवल्ली हो गई थी ग्रौर वह मन्दिर वक्फ की जायदाद था।

वहशत ग्रपने ग्राफिस मे बैठा किसी मुकदमे की मिसिल देख रहा था कि नौकर न झाककर कहा

"मिया दुल्हन साहेबा बुला रही।"

गफूर पुराना नौकर था। वह वहशत की मा को ग्रब भी दुल्हन साहेबा कहा करता था। हालाकि ग्रब वह बेचारी किसी तरफ से दुल्हन साहेबा नही रह गई थी।

वहशत को शहरनाज ने ग्रागन ही मे पकडा

"भाई साहब, शहला का मुकदमा है।"

"क्या मोकदमा है ?"

"यह तो ग्राप ही जानें।'

वहशत तीन-दरे मे जाकर उस पलग पर बैठ गया जिस पर दुल्हन साहेबा यानी उसकी मा बैठी हुई थी ग्रौर ग्रटक ग्रटककर 'सियासत' कानपुर म छपनेवाली गाजीपुरी दगे की खबर पढ रही थी।

शहरनाज कमरे मे चली गई। फिर ग्रन्दर से खुसुर फुसुर की ग्रावाजें ग्राने लगीं। धीरे धीरे शहरनाज की ग्रावाज़ साफ होन लगी।

"मगर मैं क्या समझाऊँगी तुम्हारा केस ?"

'मुझे शम ग्राती है।"

'ऐ बेटा वकील ग्रौर डाक्टर से क्या पर्दा!" दुल्हन साहेबा बोली।

शहरनाज किवाड का एक पट पकडकर खडी हो गई ग्रौर बोली

"भाई साहब। शहला ग्रादाब कह रही है।

'उससे कहो कि चचा मरहूम की बवक्त मौत पर दिल न कुढाएँ। वह बडे बहादुर ग्रादमी थे। देखो बीबी," वह शहला से बातें करने लगा, "ग्रादमी हमेशा मरते रहते हैं। सिफ बातें जिन्दा रहती हैं।"

"भाई से कह दो शहरू कि हम दादा की बात करने नहीं आये हैं।" शहला की आवाज़ आई, "मैं पुरसा लेने भी नहीं आई हूँ। भाई से कहो कि वह मंदिर हमारे मकान में है। और उस पर हमारा कब्ज़ा है। हम उसका हाउस टैक्स देते हैं। मैं राम अवतार चचा और दीनदयाल चचा और बाबू जगदम्बा प्रसाद वगैरा पर ट्रेसपासिंग का मोकदमा कायम करना चाहती हूँ।"

'शहरनाज़, इनसे कहो कि मोकदमा दायर करने में कोई परेशानी नहीं है। लेकिन—" वह चुप हो गया। उसे अपनी बात कहने के लिए शब्द नहीं मिल रहे थे। उसके दिमाग में वे सारे बलवे थे जो पतालीस से अब तक हो चुके हैं।—

"भाई से कहो शहरू, कि मैंने 'लेकिन' से डरना छोड़ दिया है। उनसे कहो कि कभी हमारी तरफ आकर दादी और अल्लाह मियां के डाइनासर सुनें और दादा के कमरे की वह दीवार देखें जो बरसों से कायदे आज़म की तस्वीर के टंगे होने की वजह से दागदार हो गई है। इनसे पूछो कि तस्वीर तो हट गई है। मगर दाग रह गया है। तो उस दाग को मिटाने की क्या तरकीब है। या उस दाग को छिपाने की क्या तरकीब है। क्या हम वहां कोई और तस्वीर टांग दें? हम मुसलमान हैं। हम अपने घर में बुतपरस्ती नहीं होने देंगे।'

"मगर वक्फ—"

'वह वक्फ दादा के यूं मारे जाने से बहुत पहले बनाया गया था। यह बात सिर्फ मैं जानती हूं कि वह शंख कुएं से खुद नहीं निकला था। यह बात भी सिर्फ मैं जानती हूँ कि दादा ने उस मंदिर में सुबह की नमाज़ पढ़ने के बाद शंख फूंका था।"

'क्या!" वहशत सँभलकर बैठ गया।

'दादा को इसकी खबर नहीं थी कि जब वह उस रात अपने कमरे में आए तो मैं जाग रही थी। जिस वक्त उन्होंने जिन्नाह साहब की तस्वीर उतारी थी उस वक्त उनके हाथों में कोई कम्प नहीं था। फिर जब वह बाहर जाने लगे तो मैंने उन्हें पुकारना चाहा। मगर मेरे मुंह से आवाज़ न निकली। और—"

"मगर दीनदयाल साहब न यज़ीर हसा या की ज़मानत ली थी।"

"तो मैं क्या करूँ? वह दादा मरहूम के दोस्त हैं।"

'बीबी, क्या तुमने तै कर लिया है?"

"जी हाँ।"

'तो मेरा ख़याल है कि तुम कोई हिंदू वकील करो।"

"क्या मोकदमे में भी हिंदू मुसलमान होन लग हैं? क्या अल्लाह मियाँ और भगवान् ने अदालतों को भी आपस में बाँट लिया है?'

वह वहशत जो वकील बाद में था और यकि पहले, उदास हो गया। वह जिस ख्वाब में देखा करता था वह देखत-ही देखत लड़की से मुवक्किल बन गई! सुरत और पत्ती का नाम और मण्ठीवाल गल—तमाम बातें ख़त्म हो गयी और जो लला और शीरी और हीर और साहनी थी, वह मुसम्मात शहना बाना बिंत कँवर अली वाकर ख़ाँ बन गई!

"यह मुकदमा लड़ने की मेरी राय नहीं है।"

"क्या?"

वहशत के पास इस सवाल का जवाब था भी और नहीं भी था। हक़, कानून इंसाफ धर्म, मसजिद, मन्दिर, घर, बाज़ार सिनेमा की बुकिंग विंडो, मल ठेले तर त्योहार, प्यार, जिन्दगी और मौत—यह और इस तरह के दूसरे शब्द कितने धुँधले हो गए हैं। लगता है कि समय इन शब्दों की रोशनाई का रंग चाट गया है, आँसू ने लिखावट को फैला दिया है। यह शब्द, जिनसे आत्मा की किताब भरी हुई थी, अब ठीक से पढ़े नहीं जाते। दिल के कोने-कान में एक डर रेंग रहा है, केंचुए की तरह। यह डर एक नया तजरबा है। यह तजरबा अभी ख़त्म नहीं हुआ है। मन्दिरों में इसी की मूर्ति है। और मसजिदों में इसी की नमाज़ पढ़ी जाती है। जो शब्द भगवान् है वह राम नहीं है—डर है। अल्लाह के लाखों लाख नामों में एक नाम और बढ़ गया है—डर! हमारी चेतना हमारी समझ, हमारी सोच और हमारे ज्ञान के कंधों पर डर की सलीब है डर। यही सत्य है। डर के सिवा जो कुछ है वह झूठ

है। हर घर यहाँ कि है, नहीं है ।'

यह सच्ची जा इस बीच मे कमरे म बठी हुई "गवान् की वेदग्नी का नाटिन दना चाहती है, दरप्रस्ल डरी हुई है। परन्तु इस यह मालूम नहीं है। गुस्सा, अन्नाहट, "प, नफरत—उसी डर के रूप हैं जो हमारे वनमार की गवान बड़ी "न है। जनमप और मुसलिम लीग, और प्रमानी दन। सन पतहसिह, प्रटल बिहारी, गुरु गोलवलकर, डाक्टर फरीदी—यह नार नाम उसी एक डर के हैं। गुरु गानवलकर और डॉक्टर फरीदी—

वहशत चौंक गया। डॉक्टर फरीदी ? यह कैसा नाम है ! चौधरी ग लीकुज्जमाँ, जहीरुद्दीन लारी, राजा मह्मूदाबाद से जो बात चली थी यह डॉक्टर फरीदी तक में आ गा गई। वहशत ने पहली बार उस अँधेरी गहराई को देखा जिसम भारत के मुसलमानों की आत्मा बद है। डॉक्टर फरीदी। यह तो कोई नाम ही नहीं हुआ। कौन है यह आदमी ? 'खानय माली रा देव मी गीरद।

वहशत मुस्कुरा दिया।

'मैं नहीं मानती यह बात।" वहला की आवाज आ रही थी, "मैं बलवा के डर ने अपने घर को मन्दिर नहीं बना सकती। जो हमें बुत-परस्ती ही करनी है तो फिर हम मुसलमान ही क्या हुए थे ?"

मैंने कहा क्या था आखिर जिसके जवाब म यह आवाज आ रही है ? वहशत न अपने आपसे सवाल किया।

'लेकिन डाक्टर फरीदी को यह हक किसने दिया कि वह मेरी तरफ "वाली घर भूत का डेरा !' मे मेरी तकदीर का फैसला करें ?" उसने सवाल किया।

'डॉक्टर फरीदी ?" शहला चकरा गई, "यह डॉक्टर फरीदी कहाँ से आ गए हमारे बीच मे ?"

यही तो मैं भी पूछ रहा हूँ। यह डॉक्टर फरीदी कहाँ से आ गए हमारे बीच में ? यह पुरी के शकराचार्य कहाँ से आ गए हमारे बीच म ? यह हम खुद कहाँ से आ गए अपने बीच मे ?

और बीच के दरवाजे के सिवा कुछ नहीं था। दरवाजा भी खुला हुआ था और उसका एक पट पकड़े शहरनाज खड़ी थी जो कभी अपने

भाई की तरफ देख लेती थी और कभी अपनी सहेली की तरफ।

दरवाज़ा खुला हुआ था।

तमाम दरवाज़े खुले हुए थ।

यह दरवाजे भी क्या चीज़ होते हैं। रास्ता देनेवाले भी यही और रास्ता रोकनेवाले भी यही।

तो दरवाजा खुला हुआ था। परन्तु बीच मे शहरू खडी थी। और बीच मे परम्पराएँ खडी थी। और बीच मे पुरानी सदिया खडी थी। और बीच मे कानपुर का दैनिक 'सियासत' और बनारस का दैनिक 'आज' खडा था और बीच मे खडी थी वह खबर जिसे दुल्हन साहेबा ज़ोर ज़ोर से पढ रही थी।

'हिन्दुओ के एक मुशतइल मजमे ने घरो मे आग लगा दी और औरतो की बेहुरमती की। सुभद्रा जोशी ने आगे चलकर कहा '

वह रुक गई।

"ई लोग वइठके काहे न बालते मजे मे? आगे पीछे काह को चलयँ आखिर?" दुल्हन साहेबा ने सवाल किया, "ऽगरियाँ न दुखाती एह लोगन की का!"

शहरनाज़ हँस पडी। वह मुह लटकाकर खडे खडे बिलकुल बोर हो गई थी।

"ठीक है शहरू।' शहला ने कहा, "भाई से कह दो कि मुकदमा तो मुझे लडना है। और जो किसी हिन्दू वकील के बिना यह मुकदमा नहा लडा जा सकता तो मैं किसी हिन्दू वकील के पास ही जाती हूँ।" वह खडी हो गई। वह अपने साथ वहशत के लिए दो कुरते लाई थी। परन्तु वह कुरते तो वहशत के नाप से बहुत बडे थे। इन कुरतो को अब कौन पहनेगा? उसने इन सवालो की आँखो म आँखें डालकर अपने बटवे से दस का एक नोट निकाला और उस नोट को नजर भरकर देख लेने के बाद उसने शहरनाज़ की तरफ दखा।

'यह मशवरे की फीस है।" उसने शहरनाज़ की तरफ नोट बढाकर कहा।

"पागल हो गई हो क्या !" शहरनाज ने कहा, 'अब तुम भाई साहब का फीस दोगी ?"

वहशत काप गया।

"डॉक्टर और वकील को फीस तो देनी ही पडती है ना।"

"देखो, तुम यह बदतमीजी करोगी तो ठीक नही होगा शहला। मैं कहे दती हू, हाँ !'

"मैं फीस देने नही आई थी। कुरते देने आई थी। लेकिन जो देने आई थी उसे वापस ले जा रही हूँ। और जो देने नही आई थी वह देने पर इसरार कर रही हूँ। कँवर वज़ार हसन खा की पोती किसी का एहसान नही ले सकती शहरू !"

शहरनाज सन्नाटे मे आ गई। शहला ने उसके हाथ मे नोट रखकर उसकी मुट्ठी बन्द कर दी।

वहशत चुपचाप उठा और बाहर चला गया। खुले दरवाज़े से शहला को उसकी पीठ दिखाई दी।

दरवाजा खुला हुआ था।

शहला खुले दरवाज़े से बाहर आ गई।

"खाला अब मैं जा रहा हूँ।"

"बईठ जाओ बेटा" दुल्हन साहबा ने कहा, 'हशमत ! कानी कहा मर गई है इ दिमागढही। हशमत, "

"मुझसे कहिए।' शहरनाज ने कहा।

"तनी गफ खा से कहके शहला के वास्ते एक ठो रकशा मँगवा द्यो।"

"मेरा रकशा खडा है खाला।" शहला ने कहा।

"आदाब !"

"जियो, बटा। अपनी अम्माँ से कह दीहो कि हम दो एक दिन म आएँगे।"

"जी अच्छा।"

यह कहकर उसने शहरनाज की तरफ देखा। शहरनाज का चेहरा उतरा हुआ था। उसकी मुट्ठी अभी तक बन्द थी। शहला मुस्कुरा दी

मौर बोली,

"अम्मा ने तुम्हें बुलाया है। उनसे मिले बिना अलीगढ मत सरक जाना।"

वह यह कहकर दालान की सीढ़ियाँ उतर गई। शहरनाज़ जहाँ खड़ी थी, वहीं खड़ी देखती रही कि शहला उससे दूर होती जा रहा है।

व पर ू की मात्रा

ठाकुर शिवनारायण सिंह वकील ने शहला की तरफ से इसतेगासा दायर कर दिया।

यह खबर शहर मे आग की तरह फैल गई। ठाकुर साहब का खयाल भी यही था। बेचारो की वकालत चलती नही थी। इसलिए जब उन्हें पता चला कि शहला एक हिन्दू वकील तलाश कर रही है और हिन्दू वकील मिल नही रहा है तो उन्होने कोशिश की कि वह मोकदमा उन्ह मिल जाए। उनका खयाल था कि यह मोकदमा लेते ही मुसलमानो के सारे मोकदमे उनके पास आ जाएँगे। उनका यह खयाल गलत भी नही था। वकालतनामे पर दस्तखत करते ही वह शहर के मुसलमानो के लीडर हो गए और हयातुल्लाह अन्सारी बडी मुश्किल मे फँस गए।

"इ मुसलमान वकील तो साले पैदाइशी गांडू हैं।" बद्रुद्दीन मुफलिस' गाजीपुरी ने एक रफी बीडी सुलगाते हुए कहा।

ठाकुर फिरो ठाकुर है।" मजीन रकनेवाले न कहा। "अउर का। इ लोग तो बात पर जान देवे म कानी कब से मशहूर चले आ रहें।" कोई और बोला। झूलन उमे ठीक से देख न सका। बिक्री का वक्त था। बलवो म दूकान बन्द पडी थी। अब जाकर तूफान थमा था और दूकान खुली थी। वह दिल ही दिल मे हिसाब लगा रहा था कि जो चालीस की चालीस फरीनी बिक जाये और बालाई खत्म हो जाये और खस्ता बिस्कुटो के दमो बण्डल निकल जायें और चाय की डेढ सौ प्यालियां भी

बन जाएँ तो बलवों का फाका खत्म हो जाये।

ठाकुर शिवनरायन जाएँ अपनी मा की

"चार चाय" न जाने किसने कहा और झूलन के दिल मे आई हुई गाली आधी रह गई। वह चाय बनाने लगा क्योंकि ठाकुर शिवनारायण सिंह को गाली तो वह कभी भी दे सकता था।

"अल्लाह बस। बाकी हवस!" गली के नुक्कड से बेहाल शाह के नारे की आवाज आई। शाह साहब की आवाज सुनकर झूलन भल्ला गया क्योंकि बेहाल शाह उसके पिता बधू उस्ताद के दोस्त थे, इसलिए जब आते थे तब मुफ्त की चाय पीते थे और हराम की फरीनी खाते थे।" झूलन ने बडी हसरत स फरीनी की सिकोरियो की तरफ देखा।

बेहाल शाह की माँ का

"ला बटा, एक चाय पिला।" बेहाल शाह की आवाज आई और झूलन की गाली फिर अधूरी रह गई।

'सलामलेकुम चा।" उसने मुस्कुराकर बेहाल शाह का सलाम किया।

बेहाल शाह पचास साल के एक काले-मुजग आदमी थे। आखें इतनी लाल थी, जैसे बरसो का धुआ भरा हो। कोई उनकी आँखो म नहीं देखता था। उनकी आखो मे देखने से अपनी आँखो मे पानी आ जाता था। और इसलिए यही आँखें उनकी ताकत थी। इन्ही आँखो के कारण उनके दरवाजे पर शहर की औरतो का ठठ लगा रहता था। यह दिन रात बच्चे बाटते रहते थे। किसी को पाता चाहिए, किसी को नवासी। किसी के यहा तावड तोड सात लडकिया हो चुकी हैं और मियाँ कहता है कि आठवी हुई तो तलाक द दूगा। यह बीमार हैं। वह दुखी हैं। इसका मिया कत्ल के मुकदमे म फँसा हुआ है। उनी अल्लाह मियाँ से कहिए शाह साहब, कि ऊ ऊ झाडूमारे की मव्वत एही तरा लिक्खिन रहा त ए मे पुक्का के अब्बा का कउन कसूर है।'

शाह साहब के आँगन म तमाम आँगनो के आँसू बरसत रहते और साथ आँसमूरखन खेलते रहते और शाह साहब तमाशा देखत रहत।

परेशानी यह थी कि अल्लाह मिया से उनकी कोई खास जान-पहचान नहीं थी। और जब से हाजरा और अल्लाह मिया की बातचीत होने लगी थी, उनका कारोबार कुछ मन्दा पड गया था। हाजरा का दरबार बहुत बढ गया था क्योकि उसके यहा तो कुछ चढावा भी नही चढाना पढता था। शाह साहब ने बडा ज़ोर मारा कि औरत ज़ात फिर औरत ज़ात है। परन्तु उनकी एक ने न सुनी। क्योकि सबने अपनी आख से देख रखा था कि हाजरा अल्लाह मिया से बातें करती है।

इसलिए बेहाल शाह को एक मज़ार की सख्त ज़रूरत थी। वह समाचार-पत्रा मे वह इश्तहार तो दे ही नही सकते थे कि ज़रूरत है एक मज़ार की! और शहर में जितने कायदे के मज़ार थे, वह सब उठे हुए थे—कि एक सुबह का कँवर वज़ीर हसन के मरने की खबर मिली और बेहाल शाह का मज़ार मिल गया।

वजीर हसन के चारो तरफ एक मिथ का जाल बुना जाने लगा। पहले तो शाह साहब ने एक ख़ाब देखा कि एक आदमी मुह पर हरा नकाब डाले सफेद घोडा उडाता आया और डपटकर बोला यहा कहा बैठा है। वज़ीर हसन के मज़ार पर जा।' यह ख़ाब देखकर, उनकी आख खुल गई। वह पसीने मे तर-ब तर थे और उनकी कोठरी जूही की महक से ठसाठस भरी हुई थी। जब उन्होने ताबड-तोड तीन रात बराबर यही ख़ाब देखा तो वज़ीर हसन को वज़ीर हसन रज़ी अल्लाह[1] कहने लगे। और फिर कर्फ्यू के उठत ही वह वज़ीर हसन के घर गए।

अल्लाह बस। बाकी हवस।" उन्होने नारा मारा, "दुल्हन बेटा से कहो कि बेहाल शाह आए हैं।"

आबेदा दरवाज़ पर आ गई। डयोढी मे एक मोढा डाल दिया गया।

'बेटा, हम तुमस वज़ीर हसन रज़ी अल्लाह के मज़ार पर झाड़ू देन की इजाज़त मागने आए हैं।"

आबेदा के पास खडी हुई शहला को यह रज़ी अल्लाह बहुत अजीब लगा।

---

[1] रज़ी अल्लाह (अरबी) अल्लाह रज़ी या खुश है।

आबेदा चुप रही।

'हम तीन रात से बरोबर बुजुरगन का जूता खा रहे कि हिया का बैठा है। जा वजीर हसन के मजार पर।"

बुजुर्गों का नाम सुन लेने के बाद इन्कार की गुजाइश नही थी। चुनाँचे बेहाल शाह उसी दिन मजार पर जा बैठे। और मास्टर अब्दुल्लाह मजार की इमारत का नक्शा बनाने लगे। शहर का हर मुसलमान इस नेक काम मे शरीक होना चाहता था। इसलिए एक मजार कमेटी बन गई। रसीदें छप गयी। चन्दा लिया जाने लगा। परन्तु जहा चन्दा होगा, वहा झगडा अवश्य होगा।

रशीदुल्लाह अहरारी का तो पेशा ही चन्दा मागना था। उन्हें बडा ताव आया कि बेहाल शाह ने इतना बडा हाथ कस मार लिया। चुनाँचे एक और मजार कमेटी बन गई। और दोनो कमेटियो मे गाली-गलौच होन लगी। अहरारी साहब बेहाल शाह को लपाडिया बतात और शाह साहब अहरारी साहब को चार सौ बीस कहते।

अली बाकर पाकिस्तान मे थे। चन्दा जमा करनेवालो से कौन कहता कि भाई, कँवर वजीर हसन का मजार चन्दे से नही बनेगा।

इसी बीच म दीनदयाल न दरखास्त दे दी कि मजार बना तो फिर फसाद हो जान का डर है। और यही सुनकर शहला ने फसला किया था कि वह ट्रेसपासिग का मुकदमा कायम करेगी।

शहला अपने दादा का मजार वही बनवाना चाहती थी जहा वह शहीद हुए थे। ठाकुर शिवनारायण सिह का कहना था कि चूकि जमीन वक्फ की हवेली के अन्दर है इसलिए मुतवल्लीया को हक है कि वह हवेली मे जो तबदीली मुनासिब जाने वह तबदीली करवा ले। मन्दिर कोई बाकायदा मन्दिर नही है।

जिलाधीश सरदार कुलजीतसिंह परेशान कि आखिर इस समस्या का हल क्या हो! उनके घर पर रोज शहर के लोगो की मीटिंगें होतीं। जाहिर है कि वहाँ न बेहाल शाह बुलवाए जाते और न रशीदुल्लाह अहरारी! शहला जाती और एक दूसरे कमरे म बठती और बातें सुनती और बातें सुनाती। एक दिन उसन दीनदयाल को यह कहते सुना कि

जो वहाँ वज़ीर हसन का मजार बना तो हिंदू इस ज़िल्लत को सहन नहीं करेंगे।

शहला ने फैसला किया कि अब परदे में बैठने का वक्त नहीं है। वह उठी और उस कमरे में आ गई।

कमरे में सन्नाटा छा गया। वह सीधी दीनदयाल के पास गई और बोली।

"मैं शहला हूँ। आपके पुराने दोस्त वज़ीर हसन की पोती। मैं अपने दादा का मज़ार बनवाना चाहती हूँ। जो उनके अपने घर मे उनका मज़ार नही बन सकता तो मुझे सरकार से इजाजत दिलवा दी जाए कि मैं उनकी लाश पाकिस्तान ले जाकर उनके बेटे के हवाले कर आऊँ।"

'ए बिटिया, वज़ीर हसन का मजार तूँ हमरे आगन म बनवाल्या।" दीनदयाल न कहा, 'इ मत समझल्या कि खाली वजीर हसन मर हैं। हमहूँ मर गए हैं आधे। बाकी धरम बज़ीर हसन अउर दीनदयाल और तोहरे वकील ठाकुर शिवनरायन सिंह स बडा है।'

"धर्म बडा है तो क्या वह मेरी जमीन पर कब्जा कर लेगा! मैं वह तमाम मस्जिदें तो वापस नही माँग रही हूँ ना दीनदयाल दादा, जो सन् सतालीस मे हमसे छिन गयी। क्योंकि पाकिस्तानी मन्दिरो स निकाले हुए भगवान को भी घर चाहिए ही आखिर। लेकिन मैं आपके भगवान को अपना घर नही दूंगी।" वह काप रही थी।

कमरे मे सन्नाटा रहा।

दीनदयाल के चारो तरफ एक ज़बरदस्त तूफान था। सामने जो लडकी खडी गुस्से म काप रही थी वह उनके सबसे गहरे और सबसे प्यारे दोस्त वजीर हसन की पोती थी। और वह कह रही थी कि वह अपना घर भगवान को नही देगी।

सब उनकी तरफ देख रहे थे। वह ज़मीन की तरफ देख रहे थे और उन दिनो को याद कर रहे थे जब पाकिस्तान नही बना था। जब दूसरा महायुद्ध नही हुआ था। जब खिलाफत की तहरीक नही चली थी। जब पहला महायुद्ध भी नही हुआ था। जब वह भी बच्चे थे, हिंदू नही थे। जब वज़ीर हसन भी बच्चे थे, मुसलमान नहीं थे। वह एक ही

मालवी से पढा करते थे, और एक साथ शरारतें किया करते थे। एक साथ अमरूद चुराया करते थे। और एक ही सी डाटें सुना करते थे। और आज यह सामने खडी हुई लडकी कितनी दूर थी!

उन्होंने आखें उठायीं।

"ए बिटिया। जो तूं कह रहियु ऊ हो ठीक है। बाकी जो हम कह रहें ऊ हो ठीक है।

"ठीक है दीनदयाल दादा।" उसने कहा, "वहा कोई मजदूर काम नही करेगा। मैं बनाऊँगी अपने हाथ से अपने दादा और आपके दोस्त और आपकी दोस्ती का मजार। लेकिन इतना सुन लीजिए कि वह शख जो उस सुबह को बजा था वह मेरे दादा ने बजाया था। और शख बजाने से पहले उन्होंने वहा सुबह की नमाज पढी थी।"

जब तक लोग चौंकें चौंकें वह कमरे से निकल गई।

समर हाउस के सामने जोखन अपने रिक्शे के अगले पहिए से टिका उकडू बठा बीडी पी रहा था और सोच रहा था कि जो फिर बलवा हुआ तो फत्ते की जरूर ठिकाने लगा देगा जो उसकी बीवी से फँसा हुआ है।

वैसे तो जोखन को बलवे बिलकुल पसन्द नही थे। जब तक बलवे अपने शहर मे नही हुए थे तब तक तो वह ताडीखाने मे बडे जोश से कहा करता था कि इस्लाम जिन्दा होता है, हर करबला के बाद। पर जब गाजीपुर मे दगा हो गया तो उसे पता चला कि इस्लाम तो बाद म जिन्दा होगा, पहले तो उसका घर ही मर जाएगा। हिन्दुओ से बच भी गया तो भूख मार डालेगी। साली सरकारे गाडू है। कर्फ्यू लगा देती है। कलट्टर साले का का जाता है! साला हमरी तरह दिन भर रिक्शा खीचे तब न पता चले बेटा को, कि कर्फ्यो का होना है। बाकी ऊ मादर

बाप सुनकर वह मुडा।

वह शहला को पहचान न सका। और वह पहचानता भी कसे? उसे क्या मालूम था कि वह छोटी सी साँवली लडकी जो कँवर साहब के आगन मे खेला करती थी कसी निकल आई है? सावला रग। बला की

नाक। आँखें गहरी कत्थई, न बडी न छोटी। वह बाला की लम्बी चोटी से खेलती हुई रिक्शे की तरफ आ रही थी। जोखन का जी चाहा कि काश! उस यह सवारी मिल जाती। परन्तु जब वह लडकी रिक्शे पर बैठने लगी तो उसे बोलना पडा।

'खाली ना है।"

परन्तु यह सुनकर भी वह लडकी रकशे पर बैठ गई और बोली 'चला।'

जोखन इस आवाज को पहचान गया। यह वही आवाज थी। वही हजारो लाखो मे एक आवाज। वह अपनी बीडी बुझाकर खडा हो गया।

'कोठीए चलें ना ?' उसने पूछा।

दरअसल वह यह सवाल करना नही चाहता था। वह उसकी तरफ दखना चाहता था और उसकी तरफ देखने के लिए कुछ कहना जरूरी था।

"कोठी नही ले चलेगा तो क्या अपन घर ले चलेगा ?" झल्लाई हुई शहला ने कहा। दोनदयाल या कलेक्टर साहब या बेहाल शाह स नहीं झल्लाई हुई थी। वह तो अपनी सहली शहरनाज के बडे भाई वहशत अ सारी से खफा थी। पर-तु जोखन को तो यह मालूम नही था ना! तो वह बेचारा चक्करा गया।

खरुनिया के बिआह मे तो आए ही को पडिहें!" यह कहता हुआ वह रिक्शे पर बैठ गया। खरुन उसकी छोटी बहन का नाम था।

"कहाँ हो रहा है उसका ब्याह ?"

—बात चल पडी। जोखन उसकी आवाज का जहर पीता रहा। वह जहर धीरे-धीर उसके सार बदन म समाता गया। रिक्शा गायब हो गया। सडक गायब हो गई। समय गायब हो गया। सिफ एक आवाज रह गई। एक बडी नमकीन और साँवली आवाज। और जस पीठ पर आखें उग आयी। उसका सारा बदन ऐंठने लगा।—अरे जो हम जिन्दगी-भर एक्की दिन रिक्शे का कराया माँगें तो जोखन नही भड्वा कह लीहो। ऊ बहिनचोद ठाकुर मे का रक्खा है ?—

और सच्ची बात भी यही थी कि खुद शहला को भी यह नही मालूम

था कि ठाकुर शिवनारायण सिंह मे क्या रखा है। ठाकुर साहब एक सूखे-सड़े हुए आदमी थे। नीचा माथा, वीरान आंखें, छोटा तिकाना मुंह, आवाज़ ऐसी, जैसे कोई कायर दूर खड़ा गालियां बक रहा हो। ख्वाबों के सिवा उनके पास कोई चीज़ खूबसूरत नहीं थी। क्योंकि सूरत देखती है खुली आंखें और ख्वाब देखती हैं बंद आंखें।

ठाकुर साहब ख्वाबों के बड़े शौकीन थे। उनके पास भांति भांति के ख्वाबों का एक म्यूज़ियम भी था। टेनिस खेलते तो रोड लेवर की ऐसी तसी कर देते। क्रिकेट खेलते तो सोबर्ज बच्चा दिखाई देने लगता। उन्हें वकालत में पेरी मेसन[1] का स्टाइल पसंद नहीं था। परन्तु वह डेला स्ट्रीट[2] की जांघों पर हाथ फेरने के लिए कभी कभार पेरी मेसन भी बन जाया करते थे। दो एक बार जैक्लीन कैनेडी के ब्लाउज़ में हाथ डालकर वह देख चुके थे कि वहां कुछ है भी या खाली धूम धड़क्का ही है। यह उन दिनों की बात है जब जैक्लीन हिन्दुस्तान आई हुई थी। वह चार बड़ों की कान्फरेन्स में पांचवें बड़े की हैसियत से शरीक होते और देखते ही देखते दुनिया की सारी समस्याएं खत्म हो जाती और वह चौंकते तो देखते कि जो आदमी अभी तक राष्ट्रपति जानसन था, वह फिर उनका कोई मुवक्किल बन चुका है और कह रहा है कि इस समय तो वह तीन रुपये से ज्यादा दे ही नहीं सकता और वह इस सोच में पड़ जाते कि आखिर उनके हिस्से में यह सड़े हुए लोग ही क्यों आते हैं।

यह ठाकुर साहब किसी तरफ से इस काबिल न थे कि कोई लड़की उनसे प्यार करती। परन्तु खुद उन्हें लड़कियों से प्यार करने पर कौन टोक सकता था। चुनांचे वह बेचारे तो शहला की आवाज़ ही सुनकर उस पर लट्टू हो गए। परन्तु यह प्यार उनके दूसरे तमाम प्यारों से अलग था। उनमें धीरे धीरे एक परिवर्तन होने लगा। उनके दिन उस आवाज़ के लिए गरदन और गरदन के लिए बदन बनाने में गुज़रने लगे

---

१ गार्डनर के जासूसी उपन्यासों का नायक।

२ पेरी मेसन की सेक्रेटरी

और रातें उस बदन के बारे मे ख्वाब देखने में कटने लगी। धीरे-धीरे पिछले तमाम ख्वाब छूट गए। अपने जीवन मे वह पहली बार ठाकुर शिवनारायण सिंह के साथ अकेले रह गए। न कोई सोवज था न लेबर। न जैक्लीन कैनेडी थी और न जीना लूलू ब्रिजिडा। दूर-दूर तक सन्नाटा हो गया था और इस सन्नाटे मे केवल शहला के आने की चाप थी।

पहले तो यह हुआ करता था कि जब कोई जैक्लीन उसकी नसों के तारों को इतना खींच देती कि उनके टूट जाने का डर पैदा हो जाता तो वह अपनी पत्नी को हाथ बढाकर छू देता और वह उसके पलग पर आकर लेट जाती और वह धीरे धीरे उसके बदन पर हाथ फेरने लगता।

अपनी पत्नी का बदन उसे ज़बानी याद था। उसके हाथ उसके बदन पर यू चलते जैसे उसके पाँव कचहरी के रास्तो पर चला करते थे। न हाथो को सोचना पडता था कि कहाँ रुकना है और न परो को सोचना पडता था कि कहाँ मुडना है।—रास्ता अवश्य याद था, परन्तु मजिल तो कचहरी ही थी न!

पर अब वह जाने पहचाने रास्ता से ऊब सा गया था। पत्नी उसके हाथ की राह देखत-देखते सो जाती और वह जागता रहता। अकेला।

परन्तु जो ख्वाब वह देख रहा था वह उसकी छोटी छोटी वीरान आखो से बहुत बडा था, इसलिए वह सदा अधूरा ख्वाब ही देख पाता।

अपने इस ख्वाब को पूरा करने का कोई रास्ता नही था। वकालत अपनी जगह है। प्यार अपनी जगह, और धर्म अपनी जगह।

वह मुसलमानो से नफरत करता था। उसे अपनी इस नफरत का कारण नही मालूम था। जसे पुरानी दीवारो मे सीलन आ जाती है और पता नही चलता कि किधर से आई, उसी तरह उनके नये दिल मे नफरत उतर आई थी।

शिवनारायण कोई दीनदयाल नही था कि उसका बचपन किसी वज़ीर हसन के साथ गुज़रा हो। वह तो उस पीढी का था जिसे परम्पराओ का आगन नही मिला खेलने के लिए।

यह पीढी जो मुस्लिम लीग की जवानी मे पदा हुई, बडी बेचारी है। नफरत, शक और खौफ की ज़मीन पर इसका अँखुवा फूटा है। म.जी

अतीत से इसका नाता कट गया है। नाम वहशत अन्सारी हो या शिव-नारायण, दोनो ही के लिए इतिहास महमूद गजनवी पर रुक जाता है। इन दोना न कुजडों की गालिया साथ साथ नहीं खाई हैं। परछाइयो के जगल मे पदा होनेवाली यह पीढी केवल नफरत कर सकती है। समुद्र मथा अवश्य गया। परन्तु न विष हाथ आया न अमृत। कहानिया सरहद पार करते म मारी गयी। बचपन अकेला रह गया।

यह समझ मे नहीं आता कि मैं किससे नफरत करूँ। हमारे दिमाग आदादे शुमार—आकडो स भरे हुए हैं। जले हुए बाजारा घरा स्कूलो और हस्पतालो के मैले कागज पर लाशो के अक्षरो स जो इतिहास लिखा गया उसमे प्यार की महक कहा मे आएगी। प्यार, अब सिफ किताबो मे मिलता मैं कहता आखा की देखी, तू कहता कागद की लेखी।—'

वहशत ने अपनी थकी हुई आखें उठायी। उन आखा म नीद नहीं थी। धुआ था। उसने उन अलमारियो की तरफ देखा जिनमे कानून की किताबें जिल्दो की रजाइया म दुबकी बैठी उसकी तरफ टकटकी बाधे देख रही थी। वह इन किताबो से डरता नही था। उसने उनकी आखो मे आखें डाल ली। फिर अपनी थकी हुई आखो को उँगलियो से दबाकर उसन एक थकी हुई लम्बी सांस ली। वह फिर लिखने लगा

'हम उन कहानियो मे नहीं भाग सकते जो हमारे बचपन को सुनाई जाती हैं। लगता है कि वक्त के शहजादे ने इतिहास के बूढे फकीर की बात अनसुनी करके पीछे मुडके देख लिया है। और अब वह पत्थर का हो गया है। न आगे जा सकता है और न वापस लौट सकता है।

हमने अनार परियो और गुल बकावली की कहानिया सुनी हैं हमने तो दिल्ली और लाहौर और जालन्धर और कलकत्ता और नोआखाली और ढाका और रावलपिडी और छपरा की कहानियाँ सुनी हैं। एक गील न सरे राह दो मुसलमान लडकियो के साथ जिना किया। यह पता नही कि वह लडकिया बीच मे कब मर गयीं!—नगी मुसलमान औरतो का जुलूस निकाला गया और उनकी शर्मगाहों में तेजाब डाला गया।—औरतो की छातियाँ काटकर उनके साथ जिना किया

गया !—बच्चे नेज़ो पर उछाले गए—

कहानियां यह हैं। फ़र्क सिर्फ इतना है कि हिन्दू धरा मे यह ज़िना करनेवाले, और छातियां काटनेवाले और बच्चों को नेज़ो पर उछालनेवाले और इबादतगाहो मे शराब डालनेवाले मुसलमान हैं। तो कोई मुझे बताए कि इन कहानियों मे पलकर जवान होनेवाला कोई वकारुल्लाह, वहशत अन्सारी या शिवनारायण सिंह क्या करे—नफरत और शक के सिवा क्या करे ?

लेकिन मैंने यहां अपना और शिवनारायण का नाम क्यों लिखा ? हज़ार हज़ार हिन्दू और मुसलमान नामो मे से यही दो नाम क्या याद आए इस वक्त ? क्या इसलिए कि हम दो रास्ते हैं जो नहला पर मिल जाते हैं ?

नहला !

प्रेम न वारी ऊपजै, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा परजा, जेहि रुचै, सीस देय ले जाय।

लगता है कि कबीर को रीडिस्कवर करने का ज़माना आ गया है। समझ मे नही आता कि हम उर्दूवालो ने इन भक्तिकाल के शायरो को इस काबिल क्यो न जाना कि इनके दीवान, गालिब के दीवान के साथ रखे जाते। यह कबीर तो हर वरक पर गालिब से बड़ा शायर है।

समझ मे नहीं आता कि क्या करूँ। झूठ बोलने को जी नही चाहता और सच बोलने से डर लगता है। क्योंकि सच यह है कि नहला मेरा ख्वाब है और मेरी आंख खुल गई है और कोई मुझे यह नही बताता कि खुली आंखो से ख्वाब देखने का क्या दस्तूर है !—

चन्द्र-बिन्दु

शहला कँवर वजीर हसन के कमरे मे चुपचाप खडी उस धब्बे को देख रही थी जो जिन्ना साहब की तस्वीर के हट जाने से पड गया था।

तस्वीर के हटने के बाद एक बार दीवार पर कलई हो चुकी थी। फिर भी धब्बा साफ दिखाई दे रहा था। कब मिटेगा यह धब्बा ? कब एक होगा दीवार का रग ?

उसने बडी बेबसी से कमरे की चीजो की तरफ देखा। किताबें, कुरसियाँ, दीवारो पर लगे हुए तुगरे कोने मे रखा हुआ पचवान जिसकी चिलम मे अब भी उस आग की राख भरी हुए थी जिसे कँवर वजीर हसन की उँगलियो ने आखिरी बार छुआ था।

शहला अपने दादा की कुरसी पर बैठ गई। फिर उसने कनखियो से कमरे की एक एक चीज को देखा। तमाम चीजें टुकुरा टुकुराकर उसकी तरफ देख रही थी। चारो ओर बला का सन्नाटा था। उसने दादा का कलम उठा लिया। दावात की रोशनाई सूख चुकी थी। दावात की सतह म काली और लाल रोशनाई की तह जमी हुई थी। उसे लगा जैसे समय के दरिया मे रेत पड गई हो। वह उस रेत पर उतर गई। बालू से घर नही बनते, परन्तु बालू से घरौंदे अवश्य बनते हैं।

उसने सूखे हुए कलम को सूखी हुई दवात म भिगाया और सामने फैले हुए ब्लाटिंग पैड पर लिखने लगी

गुलशन मे कही बूए दम साज नही आती
अल्लाह रे सन्नाटा आवाज नही आती।

कागज फिर भी सादा रहा, परन्तु वह शेर लिख चुकी थी। उसने कलम को शीशे के कलमदान पर रख दिया। फिर वह उस शेर को बड़े ग़ौर से पढ़ने लगी जो लिखा ही नहीं गया था।—और फिर वह उस ब्लॉटिंग पैड पर सिर रखकर रोने लगी। और उसे ऐसा लगा जैसे पैड पर हाथ उग आए हैं और वह उसके बालों को सहला रहे हैं और उन अनदेखी उँगलियों में बिलकुल दादा की उँगलियों का परस है। उसके आँसू और उमड़ आए और ब्लॉटिंग पैड पर लिखा हुआ वह अनलिखा शेर भीग गया। रोशनाई फैली तो सन्नाटा भी फैला और वह अपनी आत्मा के घने जंगल में बिलकुल अकेली हो गई। बिलकुल अकेली अकेली!

अकेलापन। शायद यही शब्द इस युग की सच्चाई है।

वरहे, जिसतरा कीले खिन्डे
कुछ बुज्झ, कुछ बुज्झणो रह गये
हृदय सम दा साभण लग्गा
पाट्या उत्ते छाले प गए
इश्क तेर दे हत्थों छुट्टी
जिन्द काहड़नी टूट गई है
तवारीख अज चौंके विच्चों
भूक्खी माणी उट्ठ गई है।

क्या इतिहास वास्तव में जीवन के चौके से भूखा उठ जायगा? शहला इस प्रश्न से डर गई। उस पंजाबन को मेरे दिल की बात किसने बताई? उसने यह प्रश्न कमरे की एक एक चीज़ से किया। हर चीज़ चुप साधे उसकी तरफ देखती रही। जैसे किसी में इस प्रश्न का उत्तर देने की हिम्मत न हो।

रात जिवें पित्तल दी कौली।
चिट्टे चन्न दी कली लहि गई।
अज कलपना कसर गई है।
सुपना जीवण कसा जाए।
नींदर जिवें कुड़ाह्द गई है।

इस कडवी नींद का ग्रंजाम क्या होगा ? इंतजार की हद कहा खत्म होती है ? यदि रात पलकों की सीढी से दिन में उतर आए तो कोई कब तक जाग सकता है ? परन्तु तकिये बिना कोई सोये भी कैसे ? तो वह बांह कहा है ? क्या बदनामी की सडक बहुत चौडी है ? और यह सडक कौन पार करेगा ? मैं कि वह ? परन्तु यह 'वह' कौन है ? मुझे उसका चेहरा साफ क्यों नहीं दिखाई देता ?

जिन्द मेरी ठुरक दी
होंठ नीले पै गए
ते आत्मा दे पर चल्लो
कम्बणी चढ दी पई।
गलीया दे चिक्कड लग्घ के
जे ग्रज तू ग्रावें किते
मैं पर तरे धो दिया
बुत्त तेरा सूरजी
कम्बल दी कन्नी चुक्के के
मैं हड्डा दा ठार भन्न ला
इक कौली घूप्प दी
मैं डीक ला के पी लवा
ते इक टोटा धुप्प दा
मैं कुक्ख दे विच पा लवा

उसने किताब घुमाकर दूर फेंक दी—किताब के गिरते ही हाजरा के हँसने की आवाज आई जैसे वह हँसी उसी किताब में बन्द रही हो और गिरकर किताब के टूटते ही बाहर निकल आइ हो। सारा कमरा हाजरा की हँसी से खचाखच भर गया।

'तूहें लडकीयन जैसा कपडा पहिनत शर्मो ना आ रही का।'

'दादी !" शहला सहम गई।

'हम ही हरी बीवी से दादी कब बन गए ?" हाजरा ने प्रश्न किया, "मुँह छिपाये से काम न चलिहे। आज पकडाने हौ त बताए का पडिहे कि तूह बटे को माँ से अलग करे के वास्ते पाकिस्तान बनवाए की क्या

जरूरत रही ?"

बरसों के बाद हाजरा ने अल्लाह् मियाँ के सिवा किसी और से बातें की थी, परन्तु अजीब बात थी कि उसे अल्लाह् से बातें करता पाकर शहला को कभी डर नहीं लगा था, परन्तु यह जब अपने पति से बातें कर रही तो डर के मारे शहला को पसीना आ रहा था।

"तोरी चिलमियाँ बुझ गई है।" हाजरा ने बुझी हुई चिलम की राख कुरेदते हुए कहा। फिर चिलम उठाकर वह निकल गई और शहला फिर अकेली रह गई अपने दादा की परछाइयों के साथ।

उसने फिर कलम उठा लिया। सूखी हुई दावात मे कलम बोरके वह फिर लिखने लगी

जला है जिस्म जहाँ, दिल भी जल गया होगा
कुरेदते हो जो अब राख, जुस्तजू क्या है।

उसने पेचवान की तरफ देखा जो चिलम बिना अजीब लग रहा था बगैर सिर वाला एक धड, वह धीरे धीरे गुनगनाने लगी 'कुरेदते हो जो अब राख जुस्तजू क्या है।' वहशत अन्सारी, जरा मुझे यह बताओ कि यह गालिब वाकई तुर्क थे या मेरी तरह नौ-मुसलिम थे ? देख क्या रहे हो मेरी तरफ! मेरा दिल कोई पुरानी मिसिल नही था जिसे देखने की तुमने जहमत ही नही उठाई। तुम्हीं ने तो कहा था कि जाओ किसी हिन्दू वकील के पास मगर जो मिसिल मैं तुम्हारे पास लाई थी, उसमे मेरा दिल भी नत्थी था। और वह फाइल अब शिवनारायण सिंह के पास है। मैं उनसे कैसे कहूँ कि वकील साहब दिल के कागजात लौटा दीजिए। वह केस मैं किसी और से करवाऊगी तुम तो बडे बुरे वकील निकले जी। तुमने यह भी न सोचा कि तुम शहर के सबसे बडे वकील नही हो। मैं आब्दी साहब के पास जा सकती थी। मैं शन्वर साहब के पास जा सकती थी। मैं गुलाम मोहिउद्दीन साहब के पास जा सकती थी। इन्हें छोडकर क्या मैं तुम्हारे पास इसलिए आई थी कि तुम मुझे किसी हिन्दू वकील के पास भेज दो ? और जो तुम्ह इस सवाल का जवाब न मालूम हो कि बताओ तो गालिब थे क्या ? तुर्क यानी मुसलिम! जो तुर्क थे तो इस शेर का क्या मतलब है ? कहा जला उनका जिस्म ?

कसी राख ? और कौन कुरेद रहा है उसे ? सलजूकी तुक होने से कुछ नही होता वहशत अन्सारी। क्योकि शायरी झूठ नही बोलती और शायरी यह कह रही है कि 'जल। है जिस्म जहा '

"बेहाल शाह आए हैं।" नसीबन नौकरानी ने झाँककर कहा।

यह आवाज सुनते ही उसने दिल के किवाड धड से बन्द कर दिए। उसे यह नही मालूम था कि आज के बाद उसे यह किवाड खोलने का मौका ही नही मिलेगा। जो उसे यह मालूम होता तो वह किवाडो को इतना न जमकाती। जरा सा खुला रहने देती कि जब जरा फुरसत मिलेगी झाक लूगी।

"भेज दो।'

नसीबन को अपने सुने पर यकीन न आया। वह जहा खडी थी, वही खडी रह गई।

"खडी क्या हो, भेज दो।'

'हिआ भेज दें ?"

"हा।"

"हाँ !" यह एक शब्द का जवाब इतना भरपूर था कि नसीबन कुछ और पूछने की हिम्मत ही न कर सकी। वह चुपचाप बाहर चली गई और शहला ने देखा कि कँवर वज़ीर हसन की मेज पर धूल की तह जमी हुई है। उसन मेज पर से अपने हाथ हटा लिये। फिर दोपटटा ठीक करके वह बेहाल शाह का इन्तजार करने लगी।

बेहाल शाह को यह खयाल भी नही था कि शहला यू मिलेगी।

"अल्लाह बस। बाकी हवस।' उन्होंने कमरे म पाव रखते ही नारा लगाया। और तब मलगुजी रोशनी मे उन्हे कँवर साहब की कुरसी पर एक परछाइ नज़र आई। वह ठिठक गए। तमाम खिडकियाँ बन्द थी। पर्दे पडे हुए थे, उनका दिल उछलकर हलक म आ गया। गला सूख गया।

"अस्सलामालेकुम शाह साहब।' परछाइ न कहा।

शाह साहब इस आवाज़ को पहचानते थे।

तो यह शहला है। वह घबरा गए।

'नसिवुनी बतय्यवे न किहिस कि हिम्रां परदा है। नही त भला हम अय्यने घडघडाते कैसे चले आते !" वह जाने के लिए मुडे।

"आप जा कहाँ रहे है। तशरीफ रखिए।"

"क्या ?" शाह साहब हक्का बक्का रह गए।

आख अँधेरे से मानूस हो चली थी। परछाई बदन बन चुकी थी। उन्हें शहला की आँखो का रग दिखाई न दिया, परन्तु उसकी मिजिल बनावट अवश्य दिखाई दी। दो भरे-भरे होठ, गरदन बारह अगुल से कम नही हो सकती। शाह साहब ने सोचा। पल भर के लिए वह भूल गए कि वह यहाँ क्या आए हैं। बस दिल-ही-दिल मे शिवनारायण सिंह को मा-बहन की गालियाँ देने लगे। खिडकियाँ बन्द हैं। पर्दे पडे हुए हैं। नसीबन अन्दर चली गई होगी। बस, यह पीछेवाला दरवाजा खुला है। तो इसे बन्द करने मे कितनी देर लगेगी। कबर वज़ीर हसन का मज़ार जाए अपनी माँ की चूत मे

"आप वहा क्यो खडे हैं !" शहला की आवाज कोसो दूर से आई, "इधर आ जाइए । इस कुरसी पर।"

वह चुपचाप सामनेवाली कुरसी पर बैठ गए। बारीक दोपटटे के अन्दर से कुरते का खुला हुआ बटन झाक रहा था।

"कसे तक्लीफ की ?" शहला ने पूछा।

शाह साहब के सारे बदन पर चीटियाँ रेंग रही थीं। कुरते का खुला हुआ बटन बडी शरारत से मुस्कुरा रहा था। कमरे के अधेरे की गम गम साँसें वह अपनी गरदन पर महसूस कर रहे थे। उनके सारे बदन पर उँगलियाँ-सी कुलबुलाने लगी। अल्लास बस बाकी हवस। बाकी हवस ! हवस !

"ल्यो चिलम भर लिआए हम।"

शाह साहब उछल पडे। उन्होने पलटके देखा। हाजरा पेचवान पर चिलम रख रही थी। उन्होने हाजरा को भी कभी नही देखा था। परन्तु वह उसकी आवाज भी पहचानते थे।

हाजरा ने पेचवान शहला के पास रख दिया। पेचवान रखकर जब उठा तब उसकी निगाह शहला पर पडी।

"तोरे दादा कहाँ गए ?" हाजरा ने पूछा।

"चले गए।" शहला ने कहा।

"अरे ऊ कब तक मुह छिपायहें हमसे ?" यह कहते-कहते वह मुडी तो उसकी निगाह बेहाल शाह पर पडी। वह उन्हें कुछ देर तक देखती रही।

"का तू पाकिस्तान हो ?' उसने सवाल किया। फिर उसके चेहरे पर एक भयानक डर की परछाइ पडी। वह चील की तरह झपटी। और शहला का हाथ पकडकर भागने लगी

"अरे बस भाग। ई निगोडहा पाकिस्तान कहाँ से आ गवा। ई तो तोहू को पकड ले जय्यहे "

वह शहला को लेकर चली गई। शाह साहब उस अँधेरे कमरे मे अकेले रह गए। अन्दर से हाजरा की आवाज चली आ रही थी

"अरे नसिबनी। कहा मर गई है त। अरे ई लकडाए का बाक्स ना हैं। अरे हुआ बाकर के अब्बा के कमरे म पाकिस्तान घुस आवा है रे। ओको निकालके फटकवा बन्द कर दे "

शाह साहब उठ गए। उन्हे नही मालूम कि हाजरा की बात कहाँ खत्म हुई। वह सडक पर आए और धूप देखकर उनकी जान-मे जान आई और तब उन्हे खयाल आया कि वह कसी बेवकूफी करने स बच गए। शहला बडी जवान और बडी रसीली है, परन्तु एक मजार नही है। और जो शहला हाथ आ भी गई होती तो मजार हाथ से निकल गया होता। मजार के ख्याल ही से उन्हे नशा आ गया। आखिर म तो हर औरत एक-सी हो जाती है। झाड फूक से अब तक काम चला है तो आगे भी चलेगा। परन्तु यह मजार निकल गया हाथ से तो फिर कोई मजार हाथ नही आएगा।

"अल्लाह बस। बाकी हवस।' सडक उनकी गरजदार आवाज से चौंक पडी। सामने ऊँघते हुए एक कुत्ते ने सिर उठाकर उनकी तरफ देखा। और फिर अपने पाँव से अपनी गरदन खुजलाने लगा।

शाह साहब आगे बढ गए। कुत्ता पीछे रह गया। वह असल म शहला के पास इसलिए गए थे कि उससे कहें कि मजार बनने म दर

होने के कारण उसके दादा की आत्मा व्याकुल है। वह तो एक ख्वाब भी जबानी याद कर गए थे कि कँवर साहब एक खँडहर मे हैं। जब शाह साहब ने पूछा कि आप इस खँडहर म क्यो है तो उन्होंने जवाब दिया कि तुम लोग मेरा घर बनवाते नही तो कहा रहू बस, यह सुनकर शाह साहब की आख खुल गई। उन्हें ऐसा लगा जैसे कोई कमरे से बाहर जा रहा है। उन्होने दरवाजे की तरफ देखा। कोई नही था। परन्तु कुडी हिल रही थी और कही दूर से सुबह की अजान की आवाज आ रही थी परन्तु सारा ख्वाब धरा रह गया। पहले तो कमरे मे अधेरे ने घपला किया और फिर हाजरा ने आफ्त कर दी। अभी तो शाह साहब को शहला का पूरा नाक-नक्श भी अच्छी तरह जबानी याद नही हुआ था।

"सलामअलैकुम शाह साहब" यह आवाज बुखारी साहब की थी। बुखारी साहब एक ही वक्त मे कई साहब थे। एक तो वह एम० ए०, बी० टी० थे। फिर वह मुस्लिम ऐंग्लो हिन्दुस्तानी हायर सेकेंड्री स्कूल के प्रिंसिपल थे क्योकि वह हयातुल्लाह अन्सारी के मॅझले दामाद थे। इसके अलावा वह पी० एस० पी० के मुकामी लीडर भी थ और आनेवाले चुनाव मे पार्टी टिकट पर चुनाव भी लडनेवाले थे। इसीलिए वह पब्लिक रिलेशन पर इन दिनो बहुत जोर देने लगे थे। उनका ख्याल था कि हिन्दू वोट आपस म लड भिडकर बँट जाएँगे, इसलिए वह तीस प्रतिशत मुसलमान वोट पाकर जीत सकते हैं। उन्होने फैसला कर रखा था कि चुनाव जीत जान के बाद ही वह काग्रेस मे चले जाएँगे। और हा सकता है कि लगे हाथो वह डिप्टी मिनिस्टर भी हो जाएँ। पक्के मिनिस्टर होने के बारे मे उन्होंने अभी सोचना नही शुरू किया था। क्योकि अली जहीर और मुजफ्फर साहब जमे बठे हुए हैं। हा यदि कमलापति त्रिपाठी और सी० बी० गुप्ता म ठन गई तब चान्स हा सकता है। और यही सब सोचते हुए वह वहशत के घर जा रहे थे कि शहरनाज को शहला के पास भेजें, क्याकि यह तै था कि मुसलामान वोट शहला की मुट्ठी मे थे। शहरनाज से मिलने के बहाने वह या भी निकला करते। बुतूल से तो उन्होने प्रिंसिपल बनने के लिए शादी की थी। खुदा का शुक्र था कि वह कैंसर में मरनेवाली थी। यदि उसकी मौत तक शहरनाज की शादी न हो तो वह भी

कंडिडेट हो सकते थे। उन्हें अपना चांस भी काफी दिखाई देता। उनके घर में आते ही शहरनाज़ चहकने लगती थी। वह मज़ाक मज़ाक में सबके सामने उसका हाथ बाथ भी पकड़ लिया करते थे। (हाथ तक तो ठीक है। परन्तु बाथ उन्होंने कभी नहीं पकड़ा था। अपना जी खुश करने के लिए सोच लिया करते थे।) हाथ पकड़कर वह उसकी आंखों में झांक भी लिया करते थे। एक रोज़ तो मज़ाक मज़ाक में बुतूल के सामने वह यह तक कह गए थे कि क्या बताऊँ मेरी शादी के वक्त तुम जवान नहीं थीं वरना उसी दिन तुमसे भी निकाह कर लेता। बात मज़ाक में टल गई थी। परन्तु उसी दिन से बुतूल को चुप्पी लग गई थी। और शहरनाज़ का ज़िक्र सुनकर वह चिढ़ जाया करती थी। खैर, कोई बात नहीं। थोड़े दिनों की तो बात है। 'चन्द ही रोज़ मेरी जान, फकत चन्द ही रोज़। ज़ुल्म की छाँव में दम लेने पे मजबूर हैं हम।' परन्तु उसे केवल अपने साले की तरफ से खटका था। यह अजीब बात है कि बुखारी कभी वहशत के बारे में सोचता तो उसे यह खयाल न आता कि वह बड़ा अच्छा कवि या बड़ा ज़हीन वकील है। वह उसे केवल साला समझता था। शायद इसलिए कि साला रिश्ता भी है और गाली भी है। या शायद वह ऐसा इसलिए सोचता था कि वह उसकी दो बहनों का आशिक और एक बहन का पति था।

यह बात बिल्कुल साफ थी कि उसे वहशत बिल्कुल पसन्द नहीं था और शायद इसीलिए वह उसके घर जाने के लिए छांटकर ऐसा समय निकालता था कि वह घर में मौजूद ही न हो। उसकी मौजूदगी में वह शहरनाज़ को अपनी निगाहों से चाटने में हिचकिचाता था। और जो वह छांटकर ऐसा वक्त न निकालता तो बेहाल शाह से या उसकी मुलाकात कभी न होती।

"यह खड़ी दोपहर में कहाँ जा रहे हैं साहब ?"

बेहाल शाह सलाम ही से आवाज़ पहचान गए थे। और उन्हें न जाने क्या यह खयाल आ गया था कि आखिर वह कितनी आवाज़ें पहचानते हैं।

'तनी शहला बिटिया के पास गए रहे ई पूछे कि अब मज़ार बन

म कितनी देर है।" शाह साहब ने कहा। वह तेज़ी से यह सोच रहे थे कि क्या बुखारी का वह घाव सुना दिया जाए। यह बात शहर मे सबको मालूम थी कि शहरनाज और शहला की दोस्ती है। हो सकता है कि बुखारी शहरनाज को बताएँ और शहरनाज शहला को। बेहाल शाह को तो यह भी मालूम था कि शहरनाज के बारे म बुखारी की नीयत क्या ह ? बात यह है कि हमीदुन नायन का भूत वह कोई साल-भर से उतार रहे थे। वह हर जुमे की रात को आती थी। उसकी सास उस शाह साहब के पास छोड जाया करती थी। और शाह साहब भूत उतारने लगते थे—शान्त हो जाने के बाद हमीदुन शाह साहब को अपनी जजमानी की छोटी-बडी बातें बताने लगती थी। इस तरह की बातें जानना उनके पेशे के लिए बहुत जरूरी था। वह आखें बन्द करते और सामनवाली औरत को कोई बात बता देते कि वह चकरा जाती और यदि उसका जी चाहता तो भूत भी उतरवा लेती।

"अल्लाह बस। बाकी हवस।'

"अरे साहब किसी दिन जरा इत्मीनान से आइए तो खुलके बातें करें।" बुखारी ने इतना कहकर रक्शेवाले की पीठ मे अँगूठा मारा।

"का बताए मास्टर साहब। रात ऐसा खाब देखा कि खोपडी घूम गई। हम देखा कि " वह रुक गए क्योंकि रिक्शा चल चुका था। वह उस रिक्शे की तरफ देखते रह गए। रिक्शा 'काबुली कोठी' से आगे बढकर निगाहा से ओझल हो चुका था।

इस 'काबुली कोठी का काबुल से कोई ताल्लुक नही था। उसम गाजीपुर की मिट्टी खच हुई थी। गाजीपुरी मजदूरो के पसीने से गारा बना था। इस गाजीपुर के एक बहुत बडे वकील मोलवी सभी अल्लाह (या अब्दुस्समद) साहब ने बनवाया था। फिर भी इसका नाम 'काबुली कोठी' पड गया, क्योंकि एक जमाने तक इसमे कुछ अफगानी रहा करते थे जो मेवो या रुपयो का कारोबार करते थे। घेरदार शलवारें, ढीले कुरते, कढी हुई वास्कट, कुलाहदार साफा—हिन्दी म रुपया दिया करते थे और पश्तो मे गालियाँ। इस कोठी मे कभी कोई ऐसा काबुली न रहा जिस पर कोई कहानी लिखता। और सच पूछिए तो क्या पता

कोई रहा हो। कहानी लिखनेवाला ही कौन जुड रहा था कि उसकी कहानी लिखी जाती। टैगोर हर शहर मे तो जन्म लेते नहीं। लाखो लाख कहानियाँ लेखक की तलाश मे भटक रही हैं। लाखो-लाख कहानिया मर-खप भी चुकी हैं। कहानियाँ भी मनुष्य या पशु या पेड पौधा की तरह पदा होती हैं, जीती और मर जाती हैं तो जब रिक्शा आगे बढ गया और बहाल शाह पीछे रह गए तो 'काबुली कोठी' फिर अकेली खडी रह गई और वह उस रिक्शे की तरफ देखती रही जो सामनेवाली गली मे जा रहा था।

परन्तु बुखारी के पास इस अटल खाटी के बारे म सोचने का समय नही था। वह तो यह सोच रहा था कि आज गलती से या खाली मे वह शहरनाज के बदन के किस हिस्से को हाथ लगाएगा, चुनाव मे तो अभी देर है।

'सलामअलेकुम खलील'' उसने खलील भिश्ती को सलाम किया जो अपनी डयोढी मे बठा अपनी मदक मे चिप्पी लगा रहा था और वाटर टक्स का कोस रहा था।

'वालेकुमसलाम मिया खलील ने कहा, परन्तु उसकी समझ मे न आया कि इधर कुछ दिनो स मास्टर साहब सलाम क्यो करने लगे हैं।

परन्तु जबतक वह किसी नतीजे पर पहुचता, रिक्शा नज़ीर गुडडी वाले के घर क सामने से गुजर रहा था। तो वह सिर झुकाकर फिर अपनी मदक मे चिप्पी लगाने लगा और वाटर टक्स को गालिया देने लगा जिसने उसे एक तरफ तो बेरोजगार कर दिया था और दूसरी तरफ उससे वाटर टैक्स लेने लगा था। भिश्ती और वाटर टैक्स। कसी अजीब बात है!

'सलामअलेकुम नजीर मियाँ।''

वज़ीर गुडडीवाले ने कागज की हरी पट्टी मे लाल कागज की गोट लगाते लगाते रुककर बाहर की तरफ देखा। परन्तु इस आवाज को पहचानने के लिए ऊपर देखना बिल्कुल जरूरी नही था। इस आवाज को वह पहचानने लगे थे। अभी कोई तीन चार महीन की बात है कि बुखारी साहब सलाम का जवाब तक नहीं दिया करते थे। स्कूल मे जो धाँधलिया

हो रही थी, वह किसी से छिपी हुई नही थी। स्कूल खोला इसलिए गया था कि गराब मुसलमान बच्चे पढाए जाएँग। परन्तु गरीब माता-पिता तो प्रिसिपन के दक्तर के पास नही फटक सकते थे। पहले एल० टी०-बी० टी० मास्टर नही हुआ करते थे, कम पढे लिखे मास्टर हुआ करते थे। परन्तु जी लगाकर पढाया करते थे और गर्मी की छुट्टियो मे चन्दा जमा करने निकल जाया करते थे। परन्तु अब सरकार से सालाना मदद मिलने लगी है। बहुत पढे लिखे मास्टर जमा हो गए हैं। इसलिए पढाई चौपट हो गई। नजीर गुडडीवाला भला कैसे भूल सकता था कि किस तरह उसके बटे के नम्बर काटकर कोतवाल साहब के बेटे को "एक लम्बर' मे पास कर दिया गया था। नइमवा बेचारा हिटिक-हिटिकके रोता रहा दिन-भर

"वालेकुमसलाम मास्टर" नजीर ने कहा।

क्या हाल है भई ! कारोबार कसा चल रहा है ?"

"कारोबार को का पूछ रह आप ! अरे खाए को त पैसा जुड ना रहा तो कोई लडकन को गुडडी उडाए के वास्ते कहा से पसा दे सक्ते भला ! बाकी हम ई देख रहे हैं कि आप एहर सलाम-ओलाम ढेर करे लगे हैं। एलक्शन आलकशन लडे का एरादा हो रहा का ?"

बुखारी साहब मुस्कुरा दिए।

अरे नही साहब, एलक्शन बेलक्शन के चक्कर मे मैं नही पडता। बच्चा को पढाना वजीर बनने से ज्यादा बडा काम है। तो मैं एक बडा काम छोडके, छोटा काम क्यो करूँ ? और देखिए नजीर मियाँ, इजाम आजकल पढने मे बिल्कुल जी नही लग रहा है।'

रिक्शा आगे बढ गया। नजीर गुडडी की कमान को मा-बहन की गाली देने लगा जो खुल गई थी। बुखारी शाह ने यह गालियाँ नही सुनी। और जो वह सुन लेते तब भी उन्हें यह खयाल न आता कि वह गालियाँ उन्हें दी जा रही हैं। वह तो शहरनाज की जवानी और बुतूल की मौत के बारे मे सोच रहे थे।

'आदाब माट् साहब" शहजादी तवायफ़ ने उन्हें झुककर आदाब किया। बुखारी साहब घबराकर इधर-उधर देखन लगे। इलेक्शन के

दिनो मे आदमी को जरा चौकन्ना रहना पडता है ।

"आपने तो हमे बिल्कुल ही भुला दिया ।" शहजादी ने शिकायत की । बुखारी साहब ने खीसें निकाल दी ।

'आजकल स्कूल का काम जरा बढ गया है ।" उन्होने यह कहकर रिक्शेवाले को टहोका दिया, 'अफीम खाई है क्या ।"

रिक्शेवाला शहजादी के बदन का लुत्फ ले रहा था । चौंक पडा । तेज तेज पडिल मारने लगा ।

'इ बडी हरामी है भैय्या ।' उसने शहजादी के बारे म राय दी ।

बुखारी साहब कुछ न बोले । वह जानते थे कि यह रिक्शेवाला भी वोटर है ! वह सलाम करते करत यू भी थक गए थे । और अभी शहरनाज के साथ थकना बाकी था । वह मुस्कुरा दिए ।

हशमत नौकरानी ने दरवाजा खोला । डयोढी मे अधेरा था और खनकी थी । उन्होने हशमत की तरफ देखा । बाप रे बाप । लडकी है या चाट की दुकान ।

'आदाब मिया भाई ।" हशमत ने इठलाकर कहा । अब बुखारी साहब उसकी बात कस टालत । उन्होने उस आकर दाब लिया ।

"अरे कोई देख लेगा । हशमत की बडी लजीज आवाज आई और वह तडपकर आगन की धूप म उतर गई । बुखारी साहब ने शेरवानी पहन रखी थी । फिर भी आगन मे उतरने स वह हिचकिचा गए । उन्होने डयोढी का दरवाजा बन्द करन मे काफी देर लगाई । फिर शेरवानी का दामन बराबर करत हुए वह आगन म आ गए ।

हशमत सदर दालान के बिचले दर मे खडी बडी शरारत से मुस्कुरा रही थी । दालान म पर्दे पड हुए थे ।

"अम्मा कहा है ?"

'दुल्हन बगम सो रही हैं अपने कमरे मे छोटी बाजी जाग रही हैं अपने कमरे म । और मैं यहा खडी आपका इन्तजार कर रही हूँ । आखिरी बात हशमत ने बहुत धीरे स कही क्योकि बुखारी साहब पास आ चुके थे ।

हशमत चार दर्जे पढी हुई थी, इसलिए वह दुल्हन बगम की गँवारू भाषा नही बोलती थी । वह पढे लिखो की भाषा बोलती थी । छोटी

बाजी और भाई साहब की भाषा बोलती थी और गई रात को चुपके मे भाई साहब का स्वाब भी देख लिया करती थी। अनारकली फिल्म उसन बारह बार दखी थी। अनारकली के लिए उसका दिल फिल्म के उतर जाने के बाद भी महीनो तक दुखता रहा था।

वह वक्त निकालकर छोटी बाजी के नाम आनेवाली पत्रिकाएँ भी पटा करती थी। अदब-लतीफ, शाहराह सवेरा उसे कृष्णचद्र वेदी, मटो, कासिमी, इसमत चुगताई, मुमताज मुफ्ती (उसकी समझ मे यह नहीं आता था कि मुमताज मुफ्ती क्यो है नक्द क्या नही है—या उधारी क्या नही है।) करतुलऐन हैदर, इसमत चुगताई वह दुल्हन बेगम को पढ़-पढके कहानिया सुनाया करती। मटो और इसमत की कहानिया वह दुल्हन बेगम को नही सुनाया करती। 'काली शलवार सुनाते समय उसके खून की रफ्तार तेज हो गई थी और दुल्हन बेगम न जमीन-आसमान एक कर दिया था कि ऐसी गन्दी कहानिया घर मे आती कसे हैं। फिर छोटी बाजी ने भी उसे बहुत डाटा था कि वह उनकी किताबो को हाथ न लगाया करे, तो वह मटो और इसमत की कहानिया छुप छुप कर पढा करती थी।

बुखारी साहब मुस्कुराए। उनकी मुस्कुराहट हशमत के सारे बदन पर गम-गम लेप की तरह चढ गई और उसे लगा जैसे वह हशमत नही है बल्कि मटो की कोई हिरोइन है।

"तुम्हें बुतूल बहुत याद करती है। कभी कभार आ जाया करो।"

देखिए मिया भाई, मुझे आपसे बहुत डर लगता है—हाँ।" वह इठलाई।

'जिस दिन कहो उस दिन डर निकाल दू।"

'कहाँ छिपाके रखा है आपने ?"

"क्या ?'

"मेरा डर !"

वह हँसती हुई दुल्हन बेगम के कमरे की तरफ चली गई और बुखारी शहरनाज के कमरे की तरफ मुड गए।

शहरनाज लेटी हुई कुछ पढ रही थी। उसन बुखारी की आहट नही

सुनी। बुखारी चौखट पर रुक गए।

छत गीर पखा चल रहा था। दरवाजे की तरफ शहरनाज के पाव थे। उसने गरारा पहन रखा था और पाव पर पाव रखे पढ रही थी।

"मिया भाई आए हैं छोटी बाजी!"

हशमत की आवाज ने चौखट पर खडे बुखारी को चौका दिया। अन्दर शहरनाज भी चौक पडी। उसने सिरहाने रखा हुआ दापट्टा उठाकर ओढ लिया। बुखारी साहब कमरे मे आ गए।

"क्या पढ रही हो?"

"क्या बताऊँ?" शहरनाज ने कहा।

'शरबत पियेंगे मिया भाई?" हशमत ने पूछा।

काहे का शरबत पिलाओगी?" शहरनाज ने सवाल किया।

"गर्मी से आ रहे हैं।" हशमत ने कहा, 'पन्ना बना लाती हू।"

हशमत चली गई। बुखारी साहब शहरनाज के पलग पर बैठ गए।

'बडी सख्त गर्मी है।" उन्होने शेरवानी के बटन खोलते हुए कहा।

'मई मे भी गर्मी नही पडेगी तो कब पडेगी!"

जवाब मे बुखारी साहब पाँव लटकाए लटकाए लेट गए। फिर उन्होने शहरनाज के तकिय के लिए हाथ बढाया। उनका हाथ शहरनाज की टाग को छूता हुआ तकिय पर पडा। फिर वह तकिये को पकडने के लिए मुडे। उनका हाथ शहरनाज की टाग से लगा रहा।

"तोडिएगा नही मेरे तकिये को।' शहरनाज ने एक हाथ से तकिया और दूसरे हाथ से बुखारी साहब का हाथ उठाते हुए कहा।

बुखारी साहब ने मुस्कुराकर अपना हाथ वापस ले लिया। फिर कुहनियो के बल लेटते हुए बोले, 'भई आज मैं एक काम से आया हूँ।"

"इस खडी दोपहर मे क्या काम निकल आया?"

'भय्या, मैं भाई जान से बहुत घबराता हूँ।" उन्होने तकिये को मोडते हुए कहा।

'हा तो इसमे मेरे तकिये का क्या कसूर है?"

बुखारी साहब ने तकिये को सीधा कर लिया।

"और आज जिस काम से आया हूँ वह तो उनके सामन कह ही नही मक्ता।"

"क्यो हमे पिक्चर विक्चर दिखलाने का प्रोग्राम बना रहे है क्या ?"

'पिक्चर मे क्या रक्खा है। जब चाहो तब दख लो।"

"बाजी कैसी हैं ?"

"मुझसे अब उनकी तक्लीफ देखी नही जाती। मरज ऐसा है कि जीने की दुआ दो तो बददुआ नजर आए। मेरा घर तो उजड गया शहरू। उनकी जिन्दगी मौत की अमानत है। हर वक्त यह डर लगा रहता है कि मौत अपनी चीज लेने कभी भी आ सकती है।"

'मैं तो दुआ करती हूँ मिया भाई, कि बाजी इस मुसीबत से छूट ही जाएँ तो अच्छा हो।'

'तुम यह बात कह सकती हो क्योकि तुम सगी बहन हो। कोई तुम्हारी इस बात पर हाशिया नही चढाएगा। मैं जो यह बात मुह से निकालू तो तुम्ही दौडा लोगी कि तुम्हारी बहन की मौत की दुआएँ माग रहा हू।"

"काहे की दुआ माग रहयो दुल्हा मिया !" दुल्हन बेगम आ गई। बुखारी साहब घबराकर बैठ गए।

'आदाब।"

"जीओ। मँझली का जी क्यसा है आज ?"

'वसा ही है। कुछ समय म नही आता।"

"मैं कल बुलाए रहियु बेहाल शाह को।' दुल्हन बेगम बुखारी के पास बैठ गई, "ऊ त कह रहें कि केहु जादू करवा रहा। बाकी हमारी समय मे ई ना आता कि कोई हमरी बेजबान बच्ची पर काहे को जादू करवा रहा। ऊ केहुका का बिगाडिस है आखिर। कल्ह हम आसी साहब[1] किहा जाके एक दो चद्दरो मान आए हैं।"

'आप लोगो की जिहालत आखिर कब खत्म होगी अम्माँ ! मेडिकल

---

१ उदू के प्रसिद्ध लोगा ने उन्हें पीर मान लिया। और अब हर साल गाजीपुर में उनका उस होता है।

साइस कहा से कहा गई और चादर मानती फिर रही हैं।"

"तू जेको कह रहियु ऊ मुई चाहे जहा से जहा चली गई हो। ओके आए-जाए से हम्मे का। हम काहें न मानें चद्दर ! मैं त जरूर मनिहा। तनी तूहू देख ल्यो अपनी दुलारी साली की जवान दुल्हा मिया।"

"बच्ची है अम्मा।"

"अय्यसी बच्चियो ना हैं। अल्ला रक्खे बिवाह हो गया होता त तीन बच्चन की मा भई होती अभइ तक।"

बुखारी साहब ने सोचा कि अब जो बात न बदली गई ता बढ जाएगी, तो वह बोले

"हम तो आपको यह बताने आए थे कि अब के हम खडे हो रहे हैं।"

"अराम म बय्यठे रहो बेटा। गर्मी मे खडे होने की का जरूरत है।"

"मैं इलकशन की बात कर रहा हू।" वह शहरू की तरफ मुडे, "शहरू, जो तुम अपनी सहेली शहला का मेरी मदद करन पर राजी कर लो तो मैं लड जाऊँ इस साल।'

"मैं तो महीनो से नही गई हू उसके पास। उसका दिमाग चल गया। भाई साहब को कसल्टेशन फी द गई। मैं अब उसका मुह नही देखूगी।"

'ए भाई, वकील को फीस दे गई ऊ बेचारी त कउन कयामत आ गई।"

"आप नही समझती अम्मा!"

"हाँ अउर का। अम्मा त बौडही दिवानी है और तूही त एक ठो बोकरात पैदा भई हौ इ खानदान मे। बहनाई बेचारा गिडगिडा रहा। लाट साहब भला काहे को माने लगी बेहूँ की बात। शान मे फरक आ जय्यहे।"

अब शहरनाज दुल्हन बेगम को क्या समझाती। उसन बुखारी साहब की तरफ देखा। बुखारी साहब दरवाजे की चिलमन को देख रहे थे।

चिलमन उठी और वहशत अन्दर आ गया।

वहशत उम्र मे बुखारी साहब से छोटा था। परन्तु रिश्ते म बडा था। सो उसे आता देखकर वह खडे हो गए और बोले

अरे माई साहब, आप अभी से कैस आ गए ?"

'बाबू अम्बिका परशाद' का इन्तिकाल हो गया।" वहशत ने काला कोट उतारकर शहरनाज की तरफ फेंकते हुए कहा।

यह बाबू अम्बिका प्रसाद हयातुल्लाह अंसारी के साथियो म थे और हिन्दू महासभा के लोकल लीडर थे।

यह लोकल लीडर भी बडी अजीब चीज होता है। यह चम्चा के सट का सबसे छोटा चम्चा होता है। यह लोगो से यह कहता रहता है कि यह उस आल इडिया, अखिल भारतीय या कुल हिन्द लीडर की नाक का बाल है परन्तु यह खूब जानता है कि बाल यह अवश्य है परन्तु नाक का बाल नही है। इसके पास कोई अपनी बडाई नही होनी। यह जिस नाक का बाल है यदि वह नाक कट जाए तो यह भी कटा हुआ मान लिया जाता है। परन्तु इसकी एक न्युसेंस वैल्यू अवश्य होनी है, इसलिए यह छोटे-मोटे काम करवाके रोब झाडता है लोगो पर। सरकारी अफसर वास्तव मे उस नाक से डरते हैं जिसका यह बाल होता है[1] बाबू अम्बिका प्रसाद नये नये लोकल लीडर हुए थे, इसलिए उन्ह यह पता नही था कि बस किसी की नाक का बाल हो जाने से काम नही चलता। वह चिल्लाते सबसे ज्यादा थ। चिल्लाते चिल्लाते उनकी आवाज बिल्कुल बैठ गई थी। उनका खयाल था कि कांग्रेसियो कम्युनिस्टो और पाकिस्तानियो ने उन्ह मिलमिलाके सन्दूर खिला दिया है। कलेक्ट्रेट की बार मे ये सब स्वर्गीय से लुत्फ लिया करते थे। हद तो यह है कि जिला हिन्दू महासभा के जेनरल सेक्रेट्री पण्डित लक्ष्मी नारायण सिंह भी उनसे खासा लुत्फ लिया करते थे और वह मरे भी बडे लाकल तरीके से। बार मे जवाहरलाल नहरू पर खफा होते होते उनका देहान्त हो गया। 'गली हमने कही थी तुम तो दुनिया छोडे जाते हो'! चूकि बार असोसियेशन सीनियर जूनियर-तेज और घामड वकीलो मे फर्क नही करती, इसलिए उनके मरते ही कचहरी बन्द हो गई और बुखारी साहब का सारा प्रोग्राम बिगड गया।

---

१ यह प्रमाद है। उर्दू घराना मे प्र की आवाज नहीं है। इसलिए प्र पर हो गया। और फिर स को श बना लिया गया।

परन्तु उन्हें कुछ-न कुछ तो बोलना ही था तो बोले

"अच्छा हुआ मर गया कमबख्त। खबीस बड़ा मुसलमान-दुश्मन था।"

वहशत के होठों पर एक थकी हुई मुस्कुराहट आ गई।

'मुसलमान दुश्मनों के मरने की दुआएँ यूँ न मांगिए भाई बुखारी," उसने कहा, 'वरना बहुत से मुस्लिम लीडरों को भी मलकुलमौत पकड़ ले जाएगे।'

"क्या मतलब ?" बुखारी साहब की भवें खिल गयी।

"मतलब यह कि जो मुसलमानों को गाली देता है वह हिन्दुओं का दुश्मन है और जो हिन्दुओं को गाली देता है वह मुसलमानों का दुश्मन है।"

'आपकी तो मन्तक ही निराली है।'

"कम्युनलइज़्म सिर्फ कम्युनलइज़्म है भाई बुखारी! जब तक हम उसे हिन्दू मुसलमान और बंगाल पंजाब मे बांटते रहेगे तब तक शहर जलते रहेगे। लेकिन आप यह बात नही समझेंगे।'

"क्यों ?"

'क्योंकि आज कचहरी में ज़हीर आलम यह बता रहे थे कि आप इलक्शन लड़नेवाले हैं। और इलक्शन लड़ना है तो आपको वोट मांगने हैं। टिकट किसी पार्टी का हो, वोट जात पात और मज़हब ही के नाम पर मांगा जाता है। I am absolutely disgusted with our socalled Secular Political Parties" उसके मुंह का मज़ा खराब हो गया, उसे उस कमरे में घुटन होने लगी। मुझे अकेली आर० एस० एस० की सरकार कुबूल है, मगर यह कम्युनिस्ट-जनसंघ और कम्युनिस्ट मुस्लिम लीग सरकारें कुबूल नहीं हैं।"

"कहाँ बनी हैं यह सरकारें ?'

बनी तो नहीं हैं। लेकिन हालात यही रहे तो बन जाएँगी।

तो क्या आप यह चाहते हैं कि नेहरू की नादिरशाही यूँ ही चलती रहे ? इतने दिनों में इस सरकार ने बेरोज़गारी और फ्रस्ट्रेशन के सिवा और क्या दिया है ? और अगर '

लत और गाजीपुर दोनो ही को छोड दने का फैसला कर लिया था। उसन कई जगह दरखास्तें भेज रखी थी, और कही जगह मिलन की तो उसे कोई खास उम्मीद न थी। परन्तु उस अलीगढ युनिवर्सिटी के कानून विभाग मे रीडर हो जाने की पूरी उम्मीद थी।

उसन दस रुपये के नोट को चुटकी से मसलकर दखा और अपने आप से यह पूछने लगा कि क्या दस रुपय का यह नोट जिन्दगी गुजारन के लिए काफी होगा ?

उसे पहली बार लगा कि जीना बडा बोरिंग काम है।। यह लाखो लाख, करोडो करोड, अरबो-खरबों लाग कैसे जीते चले जाते हैं आखिर! जगह की इतनी कमी है कि एक एक बदन म कई कई लोग रह रहे हैं। और यह कई कई लोग एक दूसर के दास्त भी नही हैं। दुश्मन हैं। अजनबी हैं। और इस भीड मे काई अपन को कैसे पहचाने ? यह एक आइने के टुकडे नही हैं। यह अलग अलग व्यक्तित्व हैं जो एक ही बदन म समा गए हैं। सभी असली हैं। सभी जीवित हैं। तनहाई नही मिलती कि कोइ चुपचाप लेटकर दस रुपये के एक नोट के बारे मे सोचे। शहला ने यह नोट किसे दिया था ? उस वहशत असारी को जो वकील है या उस वहशत को जो कवि है या उस वहशत को जो शहरू का बडा भाई है ? यह किसकी फीस है और किसने दी है ? यह नाट उस शहला न दिए हैं जो मेरे लिए कुरत बनाती थी या उस शहला ने जो अपने दादा का मजार बनाना चाहती थी ?

यह डोर बहुत उलझ गई। क्या वहशत असारियो की इस भीड को पता है कि उनमे से एक शहला से प्यार करता है ? तो फिर यह उसके लिए कुछ करते क्या नही ? सब अपनी अपनी धुन म लग हुए हैं। वकील वकालत कर रहा है। कवि कविताएँ लिख रहा है। भाई शहरू की शादी और बुतूल की मौत के बारे म सोच रहा है। बेटा मा की गोद में सिर रखकर लेट जाने का अवसर ढूढ रहा है। किसी के पास इतना समय नही कि पल भर को रुक जाए और प्रेमी से पूछे कि यह दस रुपये तुम कस खच करोगे

"शरबत पी लीजिए भाई साहब।" हशमत ने कमरे म आकर

कहा।

वहशत ने मलगजी रोशनी मे हशमत की तरफ देखा। उसका दोपट्टा गले म पडा हुआ था। उसकी आँखो मे एक शर्मीली चमक थी। उसके हाथ म शरबत का गिलास था—परन्तु वहशत असारियो की भीड म किसी के पास वह आखे नही थी जो हशमत की आँखो की गहराई म उतरकर उसके दिल की बात निकाल लाती।

"नही मैं नही पीऊँगा।"

"बडा ठण्डा है भाई साहब।"

—दस रुपये के इस नोट से ज्यादा ठण्डा तो हो नही सकता हशमत। वह यह पूछना चाहता था। परन्तु उसने यह पूछा नही।

"नही—असल मे मेरे सर मे दद हो रहा है जरा!" वह साफ झूठ बोला।

"लाइए दबा द।'

हशमत गिलास को मेज पर रखकर उसके पलग की तरफ बढी।

"अरे अरे यह क्या कर रहे हैं आप?" उसने उसके हाथ से दस का नोट छीन लिया "फाड ही डाला था आपने बेचारे को!"

वहशत चौंक पडा। दस का नोट हशमत के हाथ मे था। उसने अपने आपको बिल्कुल अकेला पाया। बिल्कुल खाली। वह हशमत की उँगलियो की तरफ देख रहा था जो उस नोट की सलवटें निकाल रही थी।

"किसका गुस्सा उतार रहे थे आप इस गरीब पर?" हशमत ने उसकी तरफ देखकर कहा। यह कहत कहत उसने उस नोट को अपने गरेबान मे रख लिया, 'अब यह नही मिलेगा आपको।"

"हशमत!"

'नही दूगी।"

'कोट को जेब म बटवा है। कोई और नोट निकाल लो।"

'मैं तो यही नोट लूगी!" हशमत ने कहा।

उसका हलक सूख चला था। एक अजीब मीठा-मीठा सा डर ठण्डी हवा की तरह उसके बदन म उतरता चला जा रहा था। जस रेत मे पानी उतर जाता है। यही नोट चाहिए तो लीजिए हाथ मरोडके। मैं

ता नही दूगी।" यह कहते-कहते उसने खाया से किवाड की कुण्डी खाल दी। अनारकली। साहिबे आलम।

महाबली

वहशत खडा हो गया। वह हशमत की तरफ बढा। हशमत की आखें बन्द हाने लगी। वह उसके पास खडा हो गया।

"वह नाट तकिये के नीचे रख देना।" उसने बडी नर्मी स कहा, "हिदी फिल्म न दखा करो। उनका जिदगी से कोई ताअल्लुक नही होता।'

वह बाहर की रोशनी मे चला गया। हशमत कमरे के अँधेरे म अकेली रह गई। उसने दस रुपये के उस नोट को बडी नफरत से पलग पर फेंक दिया। फिर वह उसकी तरफ य देखन लगी जसे वह कोई नोट न हो बल्कि कोई लडकी हो। और तब उसे याद आया कि एक दिन शहला ने वहशत का दस का नोट लिया था।

हशमत दरवाजे की ओर मुडी। दरवाजा खला हुआ था। दरवाजे पर कोई नही था। उसने चुपके से दरवाजे को भेडकर चटखनी चढा दी। फिर वह पलग क पास आई। नाट को बडी हिकारत से जमीन पर फेककर लेट गई और वहशत के बदन की महक से बातें करने लगी।

नौकरानिया जरा जल्दी निगाह पहचानने लगती हैं। वह बुखारी की वह निगाहें पहचानती थी जो उसके बदन से और छोटी बाजी के बदन से लिपटी पडती थी। परन्तु वहशत की निगाहें तो बिल्कुल अथ हीन हुआ करती थी। जस हशमत के होने या न होने से कोई फक ही न पडता हा। दस रुपये का यह नोट क्या उससे ज्यादा खूबसूरत, वफादार और जवान था? यदि दस रुपये के इस नोट का काई महत्त्व है तो बेदी, मटो, इस्मत, कृष्णचन्द्र की कहानियो और मजाज, सरदार जाफरी, जज्बी, फैज अहमद फज, मजरूह सुलतानपुरी साहिर लुधियानवी या वामिक जौनपुरी की कविताओ मे कही इसका जिक्र क्यो नहीं आया? उसन कनखियो स उस नोट का तरफ दखा। वह जहा गिरा था वही पडा हुआ था। उसने तो पलटकर हशमत की तरफ देखा भी नही

'तुम किसी वक्त चली जरूर जाना शहला के पास।" बाहर स

बुखारी साहब की आवाज आई। हशमत घबराकर उठ बैठी। उसके बदन की बनाई सलवटें वहशत के बदन की बनाई हुई सलवटों में मिल गई थी। पहचानना मुश्किल था कि कौन सी सलवट किसकी बनाई है। उसने जल्दी जल्दी सारी सलवटें मिटा डालीं। नोट अब भी वहीं पड़ा था। उसे उठाकर तकिये के नीचे रखती हुई वह बाहर निकल गई।

बुखारी साहब ड्योढ़ी के फाटक पर रुककर मुड़े।

"हशमत को भेज दो दरवाज़ा बन्द कर ले।"

"ऊ माटी मिली कानी कहा मिट गई है एह वखत। मैं बन्द करय्यु फाटक।" दुल्हन बीबी ने कहा।

बुखारी साहब का मुह उतर गया। इस खड़ी दोपहर में आना बिल्कुल बेकार गया। उस हरामजादे अम्बिका प्रसाद का भी आज ही मरना था! और अब दुल्हन बी किवाड़ बन्द करने आ रही हैं। यह साली हशमत जरूर वहशत से फँसी हुई है। जब देखो तब भाई साहब भाई साहब करती हुई उसके कमरे में पहुच जाती है। वह यह सोचते हुए गली में आ गया कि वहशत और हशमत की कैसी गहरी छनती होगी

दुल्हन बी ने दरवाज़ा बन्द कर दिया। और जब वह पलटीं तो उन्हें पहली बार इस खयाल ने सताया कि यह आगन कितना बड़ा और कितना खाली है और तब उन्हें इस खयाल ने डक मारा कि आखिर वहशत ब्याह की बात से कन्नी क्यों काट जाता है। कहीं खुदा न करे परन्तु इसके आगे उन्होंने सोचा ही नहीं।

कहते हैं कि मुसीबत में अल्लाह याद आता है। तो दुल्हन बी को भी अल्लाह याद आया। और अल्लाह याद आया तो उन्हें यह भी याद आया कि हाजरा से अल्लाह मियां की बनी हुई है आजकल।

'यह आप धूप में खड़ी क्या कर रही हैं!' वहशत की आवाज़ आई। वह अपने आफिस से घर में आया था। हयातुल्लाह असारी ने इन्हीं गर्मी के दिनों के खयाल से सदर दालान में एक दरवाज़ा फोड़वा लिया था। मां को देखकर वह रुक गया।

"या अल्लाह" कहकर दुल्हन बी दालान में आ गयीं।

"यह आप वहां धूप में खड़ी खड़ी क्या सोच रही थीं आखिर?"

वह्नात ने फिर पूछा।

'तोरा विवाह के बारे मे सोचती रहियू और ई सोचती रहियू कि हाजरा बाजी के पास कानो फब से जाना न भवा है। और ई सोचती रहियू कि जिन्दगी का क्या भरोसा है। आज मरो त कल दूसरा दिन है।"

वह मुस्कुरा दिया। दुल्हन बी जलके राख हो गयीं।

'तोरा एह तरह से हँसना हम्मे एक्को आख ना भाता।" वह बिगड गयी, "बडट्टू बहू देखे का अरमान दिल म लिये लिये गुजर गए। हम पूछ रहे कि तोरे विवाह का शगुन कब निकलिहे आखिर पूता।'

'क्या पता।'

'अब ई त हो ना सकता कि अल्लाह मिया तोरी जोडिए लिखना भूल गए है।' दुल्हन बी ने माथा ठाना, "ओहर बहन जवान हुई जा रही है। हमरे लोगन का जमाना रहा होता त आजी जवानी माशा अल्ला स पाच छ बरिस पुरानी हो गई होती अबले तक तूह ओहू की फिकिर ना है।

वह मुस्कुराना नही चाहता था। परन्तु वह मुस्कुरा दिया। यह माएँ बेचारिया कितनी सीधी होती हैं। यह बच्चे जनती हैं और उनके जन्म लेत ही उनके विवाह के अरमान म लग जाती है। उनके विवाह के बाद पोती पोता और नवासी-नवासो की चाट हा जाती है। और इन्ही अरमानो के रास्ते पर यह एक दिन चुपचाप मर जाती हैं। मनुष्य चाद पर जाने की तयारी म है। हिन्दू मुसलमानो को खाए जा रहे हैं। मुसलमान उन्हें किचकिचाके दात काटन का अवसर ढूढ रहे है। (और कुछ तो रेडियो पाकिस्तान सुन रहे हैं। जैसे रेडियो पाकिस्तान जिबरील की आवाज म अल्लाह का सन्देशा दे रहा हो।) अलजारिया मे लडाई हो रही है। फिलिस्तीन के शरणार्थियो की समस्या खडी है। कश्मीर का काँटा फँसा हुआ है। नहरू और मोरारजी भाई मे ठनी हुई है। हिन्दुस्तान हाकी में पाकिस्तान से हार चुका है। रामनाथन कृष्णन के बाद भारतीय टेनिस का भविष्य अधेरा है। अनाज मँहगा हाता जा रहा है। बेरोजगारी लडकियो की उम्र की तरह बेरोक टाक बढती चली जा रही है परन्तु

दुल्हन बी को यही फिक्र खाए जा रही है कि शहरू बहुत बडी हो गई है ! अरे अम्मा, शहरू क्या इस दुनिया से भी बडी हो गई है ?

'ई तोरी बडी बुरी आदत है पूता। जहा मैं कुछ कहयों ना कि तूँ हँस्से ना लग्या। बहिन को बिग्राह का इरादा ना है का ? जो आज तोरे अब्बा होत त हम्म तूस गिडगिडाए का ना पटता।'

'आइए शहरा के ब्याह की बातें करें।' उसने मा के गले म बाह डालके कहा।

'और आपके ब्याह की बातें क्यो न करें ?" शहरनाज़ की आवाज़ आई।

वह अपने कमरे के दरवाज़े पर एक हाथ रखखे खडी उनकी तरफ देख रही थी। दुल्हन बी ने उसे बहुत जोर लगाके घूरा। पर तु वह वही खडी रही। बोली

'मेरा कमरा बहुत ठण्डा है। आइए यही बैठकर ब्याह की बात करें।"

'ए धीया ता एकदम्मे मे सठीया गई होका।' दुल्हन बी चकराकर बोली "माटी मिली के दीदन का पानी बिलकूल सूख गया है।"

दुल्हन बी के पीछे से वहशत ने हाथ के इशारो से शहरनाज का मना किया। परतु शहरनाज का मूड खराब था। वही शहलावाली बात पर। और उसे अपनी झल्लाहट उतारनी थी। इसलिए बोली

'मैं मँझनी वाजी नही हूँ कि जिस खूटे स बाँध दीजिएगा, वही पागुर करने लगूगी !"

खूटा !

दुल्हन बी थर-थर कापने लगी। और फिर वह हुआ जो कभी नही हुआ था। दुल्हन बी ने एक तमाचा ऐसा मारा कि शहरनाज का मुह फिर गया।

"ई तू खूटा बोलना कहा से सीख गई हा ?"

यह बात न वहशत की समझ मे आई और न शहरनाज़ के कि आखिर हुआ क्या ! सारा घर सन्नाटे मे आ गया। शहरनाज जहाँ थी वही खडी रह गई। दुल्हन बी पाव पटकती, बकती झकती अपने कमरे मे

चली गयी। वहशत ने शहरनाज का गले लगा लिया।

"क्यू मारा दुल्हन बी ने मुझे ?" वह हिटक हिटक्कर बोली, "क्या मारा ?'

क्यो ?

यह शब्द कैसा कमीना हो गया है अब ! इसकी उँगलियो ने किस सख्ती से टेंटुए दबा रखे हैं। सास लेना दूभर हा गया है। दुल्हन बी ने चाटा क्यो मारा ? शहला न दस का नोट क्यो दिया ? दूल्हा भाई लिपटे क्यो प ते हैं ?

मा हैं। मार दिया तो क्या हुआ !" वहशत न कहा, "तुम अपन बच्चो का पीटकर बदला लना।"

मैं इस वक्त हँस नही पाऊँगी भाई साहब !"

ता जरा मेरे कुरतो म बटन टाक दो।'

शहरनाज मार भूल गई। उसने भाई की आँखो मे आखें डालकर कहा, 'आपको शहला का केस ल लेना चाहिए था।"

वहशत सन्नाटे म आ गया। शहरू ने आजतक शहला की बात या नही की थी।

'क्यो ?"

'अरे आप बडे भाई हैं। छोटी बहन का मुह न खुलवाइए। किस मजे से पूछ रहे हैं क्यो ? क्योकि शहला के काढे हुए कुरता को आपन इस डर से पहनना छोड दिया है कि वह फट न जायें और क्यो ?"

वहशत बहन की तरफ देखकर रह गया। वह अपने पलग पर जा बैठी और वहीं से बाली

'आइए शादी की बातें करें।"

वह शहरनाज के पलग पर लेट गया। शहरनाज जानती थी कि वह उदास हो गया है। वह देर तक कुछ नहीं बोली। उसने भाई को उदास होने का मौका दिया।

उस खुद इस उदासी का अथ नहीं मालूम था। अलीगढ मे उसने 'हाय अल्ला—देखिए तो ' कई किए थे, परन्तु उदासी के सागर से वह दूर ही रही थी। ग़ाज़ीपुर आकर वह गवनमेंट गर्ल्स स्कूल म पढ़ा

लगा। उसने जलती हुई जगह पर हाथ रखा। जलन और बढ गई। उसन मेज स छोटा आईना उठाकर देखा। उसके गालो पर दुल्हन बी की उँगलियो के निशान थे। आइने को वापस रखकर उसन अपने आचल से आसू पोछे। वह फिर यही सोचने लगी कि दुल्हन बी न आखिर मारा क्यो ?

खूटा ! क्या बुराई है इस शब्द मे !

बहुत दिनो पहले की बात है। तब वह शायद दस बरस की रही होगी। वह अपनी ममेरी बहन के विवाह म ननीहाल गई हुई थी।

वहा वह ममरे और खलेरे और दूर-पास के भाइयो म बडी पापुलर हो गई। कोई इधर से गाल नोच रहा है कोई उधर स टकरा रहा है। बस एक गुल्लू था जो हमेशा उसकी मदद पर आ जाता।

गुल्लू उससे उम्र म चार साढे चार साल बडा रहा होगा। बडा चुपचाप लडका था। हाथ पाव का अच्छा था। तो दूसरे लडके उससे जरा दबते थे। वह शहरनाज को बचाने के लिए उसके आसपास मँड लाया करता था।

वही स पता चला कि उसके मामू ने एक रडी रख छोडी है। रडी तो वह जानती थी। लेकिन रखने की बात उसकी समझ म नही आती थी। तो एक दिन वह ममानी से बोली

"मामू मिया ने वह रडी कहा रख छोडी है। जरा हमको भी बताइए ना।' भोजपुरी-खडीबोली के जगल म उसकी ठेठ खडीबोली बिल्कुल झण्डे की तरह खडी हो गई।

हट निखोडी।' दुल्हन बी न उसे एक धपक्का दिया। देहाती मीरासनो के हाथ ढोल पर रुक गए। एक ठटठा पडा। वह भाग खडी हुई और ऊपरवाली खलवत म जाकर छोटी ममानी के पलग क नीचे रूठकर छिप गई।

यह छोटी ममानी बडे गजब की थी। अल्लाह रसूल स नीचे बात ही नही करती थी। बचारी बेवा हो गई थी और दिन रात नमाजें पढा करती थी। उन्होने गुल्लू को गोद ले रखा था। शहरनाज अगर डरती थी तो उन्ही स। वह कई बार दुल्हन बी को डाँट पिला चुकी थी कि

मँझली और छोटी से नमाज़ क्यो नही पढवाती ! अल्लाह इ चोचला ना देखे वाला है छोटी बाजी ।

शहरनाज़ ने उनके कमरे को इसलिए चुना था कि वहाँ आने से सब कतराते थे । गुल्लू के सिवा कोई आता नही था । वह चाहती थी कि घर मे उसकी ढुँढय्या पड़े । परन्तु ब्याह के घर किसी को खयाल ही न आया कि शहरनाज़ कहाँ है । खलेरे ममेरे भाइया ने जरूर भाँप लिया कि वह नही है तो वह दूसरी बहना को परेशान करने मे लग गए ।

अब शहरनाज़ तो बिल्कुल ही फँस गई उस खलवत मे । परन्तु लडकी जिद्दी थी । वही पडी रही ।

उसने छोटी ममानी की चाप सुनकर सास रोक लिया । उनके साथ कोई और भी था ।

छोटी ममानी पलग पर लेट गयी ।

'दरवजवा बन्द काहे ना कर देत्यो ।' छोटी ममानी की आवाज़ आई, 'ई बोहारगवा बिआह कानी कब खतम होइहे ।'

दरवाजा बन्द होने की आवाज आई । शहरनाज़ बहुत घबराई यो फँस जाने पर कि जो छोटी ममानी ने देख लिया तो क्या होगा ! परन्तु अभी वह अपन बारे मे पूरी तरह सोच भी नही पाई थी कि पलग पर जैसे भूचाल आ गया । वह डरकर ज़मीन से चिपक गई और उन चीटियो को देखने लगी जो न जाने वहाँ आन-जाने मे लगी हुई थी ।

'ठोक काहे न रह्यो खूटवा ।" यह आवाज़ तो छोटी ममानी की ही थी, परन्तु बहुत बदली बदली थी ।

थोडी देर क बाद भूचाल थम गया ।

'हुम्म वक्क्न भैय्या जय्यसा जूता मँगवा दीजिए !" यह आवाज़ गुल्लू की थी । शहरनाज़ ने उसकी आवाज़ साफ पहचान ली । और अब उसे यह फिक्र हुई कि छोटी ममानी कहा खूटा ठाक्ने को कह रही थी ।

"अच्छा मँगवा देंगे ।'

उसे बड़े ज़ोर की हसी आई । जो पिट जाने का डर न रहा होता तो वह खिलखिलाके हँस पडी होती ।

दरवाजा पीटा जान लगा । दुल्हन बी की आवाज आई ! 'ए छोटी

भाउज । ई का साहब ! बाहर आइए !"

"अच्छा।" छोटी ममानी ने जोर से कहा, "तू चलो हम आ रहे।" फिर वह धीरे से बोली, "तू हिअइ रहा। हम थोडी देर मे आ रहे। त फिर खूटा गाडेगे। नेमतखाने मे हलुआ रक्खा है। बाकी ढेर-सा मत ठूस लीहो। नही त टिलीली चल लगिहे।'

पैरो की चाप गूजी। दरवाजा खुला। दरवाजा बन्द हुआ और कमरे म सन्नाटा छा गया। नीचे से मीरासनो के गाली गान की आवाज आने लगी।

'बहन खोद आया।

मादर खोद आया "

गाना औरतो के कहकहो म डूब गया।

शहरनाज पलग के नीचे से निकल आई।

गुल्लू नेमतखाने के पास खडा न जाने किस चीज का हलवा खा रहा था। शहरनाज को देखकर उसका हाथ रुक गया। मुह भी रुक गया।

'तू कहा स आ गइयु ?"

'जब आप खूटा गाड रहे थे तो मैं पलग के नीचे थी।' यह कहकर उसने हलवे की प्लेट पर एक बकुट्टा मारा और मुह भरकर दीवारें देखने लगी, मगर आपन खूटा गाडा कहाँ है ?"

गुल्लू की आखो म एक अजीब सी चमक आ गई।

ऊ दूसरा खूटा है। वह बोला, "बडे मजे का खेल है। छोटी ममानी के साथ हम खेलते रहे। तू खेलिहो।'

उसने सोचा क्या हर्ज है।

गुल्लू ने हलवे की प्लेट नेमतखाने मे रख दी। फिर आगे बढकर दरवाजे की कुण्डी लगा दी।

बाकी लडे की सही ना ह।'

मैं लडती हूँ किसी स खेल मे?'

गुल्लू न उसे गुदगुदाया।

हँसी स उसकी चीख निकल ही जाती परन्तु गुल्लू न उसके मुह पर हाथ रख दिया और धीरे से बोला, "ई खेल म जोर स बोले की सही

ना है।"

खेल शुरू हो गया।

फिर खेल खत्म हो गया।

गुल्लू ने कहा, "कल फिरो खेलेंगे।"

'हम नही खेलेंगे।' वह रो रही थी।

"ना खेलि हा त हम खाना बेगम से कह देंगे।' उसने धमकी दी।

वह वहा जब तक रही तब तक यही खेल जारी रहा। और गुल्लू ही ने उसे बताया कि 'सब अउरत मरद इहे खेलते हैं और ए ही से पेट मे बच्चह पड जाता है।

बच्चे की पदाइश पर उसने बडी बाजी का चीखते सुना था। वह डर गइ। उस रात उसने कई बार यह ख्वाब देखा कि उसका पेट फाड कर बच्चे निकल रहे हैं। वह चीख-चीखकर उठ बैठी। दुल्हन बी न आयतल कुर्सी पढकर फूका। छोटी ममानी ने नादे अली पढकर पानी पिलाया। किसी दुआ का असर न हुआ तो यह तै पाया कि उसपर किसी मुसलमान जिन का साया हो गया है। दुल्हन बी ब्याह से पहले ही उस वहाँ स ले भागी।

थोडे दिनो बाद जिन खुद ब-खुद उतर गया। छोटी ममानी से फिर उसकी मुलाकात न हुई। कइ बरस के बाद खबर मिलो कि उनके बच्चा ठहर गया था और वह उसे गिरवाने के फेर मे मर गयी। उनके मरने के बाद गुल्लू का क्या बना यह किसी को नही मालूम। वह एक अनाथ बच्चा था। वह गुल्लू को कभी नही भूली। परन्तु खूटा उसके दिमाग स निकल गया। उसे और कई शब्दा का ज्ञान प्राप्त हा चुका था। और इसीलिए दुल्हन बी का चाटा उसकी समझ मे नही आया था।

'तो यह सब जबान का चक्कर है!' उसने अपने आपस कहा।

'ऐ।' बडा भाई चौक पडा।

वह भी घबरा गइ। वह तो बडे भाई को बिल्कुल भूल ही गई थी।

"मैं कुछ और सोच रही थी।"

'क्या सोच रही थी?'

'मैं यह सोच रही थी कि यह लफ्ज आखिर इतने चोले क्या बदलते हैं ?"

"लफ्ज आदमी का एक्सटेंशन है। आदमी अपना चोला बदलता है तो लफ्जो को भी अपना चोला बदलना पडता है। मगर यह लफ्ज कहाँ से आ कूदा हमारे बीच में। हम लोग तो शादी की बात करने-वाले थे। एक बात कहूँ ?"

"कहिए।"

"बात बडी बेशर्मी की है। अम्माँ ने सुन लिया तो कयामत बरपा कर देंगी। लेकिन तुम तो जानती हो कि तुम मेरी फेवरिट बहन हो।"

शहरू ने कुछ नही कहा। वह भाई की तरफ देखती रही अपनी बडी बडी आँखो से।

"मैं तुम्हारी राइटिंग पहचानता हूँ।" उसने कहा, "जहाँ तुम्हारी निसबत की बात चलती है वहाँ तुम अपने खिलाफ़ खत क्यो लिखती हो ?"

इस प्रश्न ने दीवार पर लगी हुई घडी का पेंडुलम जसे रोक दिया।

'क्या तुम किसी खास आदमी से शादी करना चाहती हो ? मेरा मतलब है कि '

"जी नही।" उसने वहशत की बात काटी, "मुझे किसी से इश्क-विश्क नही है।"

'नही नही। मेरा मतलब कि इश्क कोई बुरी चीज नही है। वह जमाने लद गए जब बडी बूढ़िया कहा करती थी कि इश्क करना रंडियो का काम है।"

नही भाई साहब। खुदा की कसम एमी कोई बात नही है। मैं शादी ही नही करना चाहती।"

क्यो ?"

"यह बात अभी अभी मुझे मालूम हुई है। मगर बहन चाहे लाख फेवरिट हो। कई बातें ऐसी होती है जो वह अपने भाई को नही बता सकती। इसलिए आइए आपकी शादी की बातें करें।'

'सच पूछो तो मैं भी शादी करना नही चाहता।'

भाई साहब, वो गुल्लू याद है आपको ?"

"कौन गुल्लू ?"

"अरे वही। एक घोंच सा लड़का नहीं था जिसे छोटी ममानी ने गोद ले रखा था !"

"दो-तीन बरस हुए बम्बई में मिला था। फिल्मों म छोटे-मोटे काम करता है। लेकिन अब न तो उसका नाम गुल्लू है न गुलाम हुसन— उसका नाम राकेश कुमार हो गया है। कह रहा था कि जल्द ही उसे एक बड़ा ब्रेक मिलनेवाला है। शांताराम या जाने कौन उसे लीडिंग रोल एसाइन करनेवाला है। बड़ी दिलचस्प अंग्रेजी बोलने लगा है। कहने लगा कि भाई साहब वकालत में क्या रक्खा है। गाज़ीपुर को गोली मारिए। यहां आ जाइए। आप तो इतने अच्छे शायर हैं। आते ही हिट हो जाइएगा।"

"अब यो वह बहुत बड़ा हो गया होगा ?"

'ताड़ जैसा निकल आया है। अपने कद बदन को गालियां दे रहा था कि उसके नाप की कोई हिरोइन नहीं मिल रही है। कहता था कि यह कद प्राब्लम हो गया है। लोग कहते हैं कि सोशल फिल्मों में यह कद नहीं चलेगा। लेकिन जो कोई हीरोइन मिल जाए तो मैं हिट होकर दिखला दूं। लेकिन इस वक्त यह गुल्लू कहां से टपक पड़ा हमारे बीच में ?"

"शादी की बात हो रही थी ना। तो वह फाखरा बाजी की शादी याद आ गई। तो फिर छोटी ममानी याद आई। उनके साथ गुल्लू याद आया। अच्छा, आप अब खिसकें यहां से। मुझे नींद आ रही है।

वहशत चला गया। तकिये पर उसके सर का निशान रह गया। उसने वह निशान मिटा दिया। क्योंकि वह गुल्लू के बारे में सोचना चाहती थी। उसने लेटकर आंखें बन्द कर लीं। और अभी वह फ़ाखरा बाजी की शादी के आंगन में पहुंची ही थी कि हशमत आ गई। उसके हाथ में कई रिसाले थे। उसके हाथ में दिल्ली से निकलनेवाली मासिक उर्दू पत्रिका 'शमा' भी थी।

शहरनाज़ 'शमा' के पन्ने पलटने लगी। वह 'शमा' पढ़ती नहीं

थी। हशमत पढती थी। परन्तु वह तसवीरें अवश्य देखा करती थी।

तीसरे पन्ने पर नये सितारे राकेश कुमार की रंगीन तस्वीर थी और नीचे उसकी आनेवाली फिल्मों के नाम दिए हुए थ।

"कैसा बांका लडका है।" हशमत ने कहा, "मैं तो मर गई इस पर छोटी बाजी। इसका पता भी छपा है सवाल-जवाब में। मैं तो आज ही खत लिखने जा रही हूँ इसे। हाय छोटी बाजी, किस गजब का खूबसूरत है।"

उसी दिन शहरनाज़ ने प्रोग्राम बनाया कि वह छुट्टिया गुजारने बम्बई जा रही है। दुल्हन बी ने बहुत ज़मीन आसमान किया कि जवान लडकिया यो लक्डाती नही फिरती दुनिया जहान म। परन्तु वह बडी जिद्दी न रही होती तो शायद उसे खूटे का अर्थ ही न मालूम हुआ होता कभी।

वह बम्बई चली गई और फिर लौटकर नही आई।

हिम्मत जौनपुरी ने अपने जिस खत मे अपनी मा को यह लिखा था कि उसकी फिल्म बस शुरू होने ही वाली है, उसी मे उसन यह भी लिखा था कि राकेश कुमार ने शहरनाज के साथ बडा बुरा सुलूक किया। पहले तो उसन उस एक फ्लट म रखा। खबर उडी कि वह उससे शादी करने-वाला है। फिर वह उसे लेकर पार्टियो मे जाने लगा। प्रोड्यूसरो और डाइरेक्टरो से उसका परिचय करवाता रहा। फिर वह मक्खन की तरह उ ह और फिनान्सरो का लगाई गई। अब वह एक सिन्धी फिनान्सर की दाश्ता है। पाली हिल पर एक तीन बेडरूम के फ्लट म रहती है। उसके पास दो कारें हैं। राकेश कुमार अब भी उसके पास आता-जाता रहता है। और वह जब नशे मे धुत हो जाती है तो उस सिन्धी फिनान्सर की तोद सहलाकर कहती है 'डार्लिंग, रिटायर होने के बाद मैं राकेश कुमार से शादी करूगी'

गाज़ीपुर स निकलकर वह इस कहानी स निकल गई। जीवन की गति इतनी तेज है कि यह सोचन का समय नहा मिलता कि यदि उस दिन दोपहर मे एक शब्द के लिए दुल्हन बी न उसे थप्पड न मारा होता तो क्या उसकी कहानी यूही समाप्त हुई होती? यह बात

शायद ही कोई माने कि एक शब्द मे इतना बल होता है कि जीवन के धार का मुह फेर दे।

दुल्हन बी का तो खर यह बात बिल्कुल ही नही मालूम थी। वह तो सिरे स पढाई ही के विरोध म थी। उन्होन बटे को कोस डाला जो जिद करक उसे अलीगढ ले गया था। अब वह दुल्हन बी को कैसे समझाता कि इसम अलीगढ़ का कोई क़सूर नही है। हजारो लडकियाँ पढ़ती हैं वहाँ। परन्तु, सब-की सब एकदम स बम्बई तो नही जाती हैं। बहुत-सी लडकियाँ हर साल भागकर बम्बई जाती हैं, परन्तु वह सब-की-सब अलीगढ की पढ़ी हुई ता नही होती ना! परन्तु वह जानता था कि दुल्हन बी का समझाना बकार था। हाँ, वह आश्चय मे अवश्य था। उसकी शहरू इस तरह की लडकी नही थी। तो क्या शहला उसी तरह की लडकी थी जसी वह निकली? क्या उसने शहला के बारे मे कभी यह सोचा था कि वह फीस एक वकील को देगी और मिसिल दूसरे वकील को?

उसे शहरनाज और शहला दोनो ही से शिकायत थी।

'अब बइठ का हा मुहू लटकाए?" दुल्हन बी की आवाज न उसे चौंका दिया, 'बाप दादा की जा सात हाथ की नाक रही ऊ कट गई। तूहू अपन बाप की अरवाह की कसम है। बम्बई जाके ओको ठिठिरिया लिआओ हियाँ। सट खीचके बइठे से काम काम ना चलिह। कहत रह हम कि ए बेटा ओका बिआह कर दियो त नाही। अभई ओकी ई उमिर ना भई है अम्माँ। अ अम्माँ जाओ जहन्नुम म बाकी मैं इ जरूर पूछियो तूसे कि बिआह करे के वास्त त ऊ छोटी रही। बाकी रडी बन के वास्त भट देना जवान कय्यस हो गई। ओसे अच्छी त मुतज बो[1] निकली जो कोठे से उतरके घर म बइठ गई। खुदा की मार ओह पर जय्यसा ऊ हमरा दिल दुखाइस है। अल्लाह करे पोर पोर सड

[1] गाजीपुर म मेरी पडोसी हैं यह लोग। मुझे नही मालूम कि उनका नाम क्या है। मैंने मुतज बो ही सुना है। मुहरम की मजलिसो में आया करती था। आवाज बडी अच्छी और सधी हुई थी। घर की बाबियो के बराबर बठा करती थी। पता नही हैं या मर गयी।

के गिरे धीम्रा की ’

बात सारे शहर म फल गई और इस जोर मे फली कि लोग थोड़ी देर के लिए शहला, ठाकुर शिवनारायण सिंह कँवर वजीर हसन और उनके मजार को भूल गए।

शहला सन्नाटे म आ गई। बेहाल शाह 'अल्लाह बस, बाकी हवस' कहते हुए उठे और चले गए। ठाकुर शिवनारायण सिंह ने मिसिल एक तरफ रखते हुए कहा

'लाइए आज आपका हाथ देख डालू।"

शहला ने मुस्कुराकर हाथ बढा दिया। ठाकुर साहब का हाथ काप गया। उन्होने पहली बार शहला को छुआ था। नम चिकनी जिल्द पर फिसलकर गिरते गिरते बचे। अपने आपको सँभालने के लिए उन्होन उस हाथ को दोनो हाथो से थाम लिया।

"दिल का रेखा तो बडी बलवान है।"

'जी हाँ।"वह बोली, 'दस रुपये देकर खिचवाई थी।"

यह बात ठाकुर साहब की समझ मे नही आई। उनकी घबराहट पर वह खिलखिलाकर हँस दी। परन्तु अपने हाथ को उसने उन दोना हाथो स बाहर नही निकाला।

'छोडिए इन लकीरो को ठाकुर साहब। क्योकि हर लकीर एक जगह से शुरू होकर दूसरी जगह खत्म हो जाती है।"

'इस लकीर को कैसे छोडू ?' ठाकुर साहब ने प्रश्न किया।

'क्यो ?" उसने अपनी मुस्कुराहट समट ली। यह प्रश्न करने के बाद उसे होश आया। इस प्रश्न का जवाब उसे मालूम था। इसी लिए वह आजतक इस प्रश्न से कतराती चली आई थी।

'क्योकि यह लकीर इस हाथ म है।" ठाकुर साहब ने जान पर खेलकर कह दिया।

उसने अपना हाथ खीच लिया। उसने निगाहे भरके उनकी तरफ देखा। वह एक पालतू कुत्ते की तरह अपने प्यार की दुम हिला रहे थे। रात के सपनो की ज़बान बाहर निकल आई थी और उससे लार टपक रही थी।

"ठाकुर साहब, मैं आपको फीस म नही मिल सकती।"

"मैं तुम्हारे लिए घर-बार, माता पिता, बाल बच्चे सबको छोड दूगा।"

कमरे म सन्नाटा हो गया।

"सबको छोड देना किसी सवाल का हल नही है ठाकुर साहब! आदमी कोई गुलदान नही होता कि उस एक कमरे से उठाकर दूसरे कमरे मे रख दिया जाए। मैं इस घर की चहीती लडकी हूँ ठाकुर साहब! मैं आधी तिहाई चीजें नही लेती। और आप पूरे-के पूरे मुझे मिल नही सकते। किसी दिन पूरे बनकर आइए मेरे सामने, तब देखू कि आप कसे लगते हैं मुझे।"

'मैं समझा नही।"

'यह हमारे इस मुल्क की रीत है ठाकुर साहब, कि लडकियाँ विदा होकर दिल मे नही जाती। घर म जाती हैं। आप अपने घर की इट है। सिफ एक इट। और एक घर मे हजारो हजार इटें होती है। दादा, परदादा मा, बाप, चाचा मामू, भाई, फेमिली, फ्रेण्डस क्या आपके घर की हर इट मुझे कुबूल करेगी?" उसकी आँखें न जाने क्यो भर आयी। वह दूसरी तरफ देखने लगी।

'तो फिर तुमने मुझे शह क्यो दी थी?"

'आपको मात देने के लिए।" उसने बिना झिझक जवाब दिया। 'अजाम कुछ भी हो ठाकुर साहब, आप मुझे छूनेवाले पहले ही आदमी रहगे। यह जो बेहाल शाह बठा हुआ था, यह भी मुझे छूना चाहता है। लेकिन मैं कुरआन नही हू जिसे हर मुसलमान आखो से लगा सकता है और चूम सकता है। और गले मे डालकर घूम सकता है। मैं एक लडकी हूँ। और मुझे सिफ वही छू सकता है कि जिसे मैं छूने की इजाजत दूगी। क्या आप यह समझते है कि मैं आपकी इस बात से धोखा खा गइ कि आप मेरा हाथ देखना चाहते हैं? मैं धोखा नही खाती।'

'फिर तुमने मुझे इतना सिर क्या चढाया?"

"क्योकि मेरे दिल ने कहा था कि मिसिल किसी हिन्दू वकील के हवाले कर दो। मेरा दिल एक चट्टान की तरह मुझसे अलग खडा है।

और मैं उससे टकरा रही हू दिन-रात, क्योकि मेरे दिल की रेखा बडी बलवान है। मैं आपसे शादी कर नही सक्ती। इसलिए नही कि आपके बाल बच्चे हैं। वल्कि इसलिए कि मैं आपको मुसलमान बनाना नही चाहती और खद हिन्दू होना नही चाहती। चकि मैं मजहब को मानती हू इसलिए सिविल मरेज नहा कर सकती। तो बताइए कि दिल की रेखा की यह सडक जहा खत्म होती है, वहा किराए का मकान कसे बनन दू? तो बीवी मै आपकी बन नही सकती। दाश्ता बनन पर मैं तयार नही हूँ। तो आप वकील ही क्यो नही बने रहते? और मुझे मुवक्किल क्या नही रहने देत? कल मेरे बयान की तारीख है ना! मेरा बयान तयार करवाइए वकील साहब।'

वह फूट फूटकर राने लगी।

ठाकुर साहब अब तक दिल ही-दिल म हजारो बार दिलीपकुमार बन चुके थे। परन्तु जब अवसर आया तो पता चला कि उनके बाल बहुत छोट है। माथे पर नही आ सकत! वह परेशान हो गए। और शहला थी कि रोए चली जा रही थी। ठाकुर साहब की समझ म जब कुछ नही आया तो वह मिसिल उलटन पलटन लग। इस मिसिल पर उनका करियर और उनके बच्चा का भविष्य निभर था। (*बच्चा का* अभी सवाल नही था। उनके एक ही लडका हुआ था आठ साल मे। परन्तु वह अपनी तरफ से मायूस नही थे।) सामने बठकर रोनेवाली लडका वडी खूबसूरत और बेहद रसीली सही, पर तु करियर, फिर करियर होता है। वह मिसिल जो उनके हाथ मे थी वह देखते-ही देखते शहला से ज्यादा सु दर और रसीली बन गयी। मुकदम का नाम दखत ही उनके अ दर वह लडाई फिर शुरू हो गई जिस शहला की खूबसूरती ने सुला दिया था। धम वडा है या करियर? धम करियर! धम बच्चो का भविष्य धम। अच्छे कपडे, अच्छा मकान— धम' हार गया। क्योकि धम अब नाम रह गया है केवल यह जतान का कि हम धम को मानते हैं मसजिदो म समाज को सिजदा किया जाता है। मन्दिरा म समाज की पूजा की जाती है। जा ऐसा न हाता तो पुरी के आचाय गारक्षा के साथ मनु रक्षा का आ दोलन भी चलात। मनुष्य को गाय का

रतवा देते। गाय माता होने के बाद भी कृष्ण नही है। कृष्ण तो मनुष्य ही है।

गाय और आदमी। कौन बडा है? तो आखिर जब बलवे होते हैं, तो पुरी के शंकराचार्य बोलते क्यो नही कि मनुष्य का काटना बन्द करो। यही से यह सवाल पैदा होता है कि शूद्र ब्रह्मा के पाव से निकले। ब्रह्मा का बदन खत्म हो गया। तो फिर मैं वहशत असारी कहा से निकला हूँ? क्या कोई और ब्रह्मा हैं?

यहा तक लिखकर वहशत रुक गया। क्या फायदा यह बातें लिखने से? हिन्दुस्तानी डिमाक्रेसी खुद जात-पात के चगुल मे फँसी हुई है। उसे कम्युनिस्ट एम० पी० सरजू पाडे[1] याद आ गया। सरजू पाडे एम० पी० बनने से पहले बडे सेकुलर थे। सकुलर वह आज भी है। और शायद कल भी होगे। परन्तु उसने जब एक दिन मज़ाक में उनसे कहा "पाडेजी क्यो न कश्मीर देकर पाकिस्तान से पूर्वी पाकिस्तान ले लिया जाए। सारा झगडा-टटा खत्म हो जाए। तो पाडेजी बोले कि 'कश्मीर के कई लाख हिन्दुओ का सवाल है।" यदि चुनाव लडना है तो यह सब दाव पेंच करने पडेगे। और जो मैं गलत कह रहा हूँ तो श्री अटल बिहारी गाजीपुर के वार्ड नम्बर १ से म्युनिसिपल बोर्ड का चुनाव लडकर देख लें। यदि हुसन तम्बाकूवाले उन्हें न हरा दें तो जो चोर की सजा वह मेरी सजा।[2] हमारे मुल्क मे धर्म चुनाव का स्टट होकर रह गया है। जो ऐसा न होता तो कोई बताए कि बाजा बजने से मस्जिदो और मोहर्रम का जुलूस निकलने से मन्दिरो का क्या बिगडता है? लेकिन मैं आखिर यह कडवी बातें क्या सोचता हूँ। मैं शहला के बारे में क्यो नही सोचता!

शहला का खयाल आते ही उसने अपनी डायरी बन्द कर दी। उसे कल की तैयारी करनी थी। यह बात उसके और बाबू बाँके बिहारीलाल के सिवा और किसी को नही मालूम थी कि कल शहला की जिरह वही करनेवाला है। बाबू साहब श्री हयातुल्लाह असारी के गहरे दोस्तो मे

---

१ श्री सरजू पाँडे से यह बात खुद मेरी हुई थी।—लेखक

२ इस वार्ड से हुसन साहब को हराकर अब शायद मूलन चायवाला चुना गया है।

थे। वहशत उनके पास गया। उसने उनसे कहा कि इस मुकदमे म उसका वकालतनामा भी दाखिल कर दिया जाए। बाबजी खुद इस मुकदमे से परेशान थे। वह जानते कि इसमे जीते चाहे कोई परन्तु हार गाजीपुर शहर की होगी। मुसलमानो से उन्ह नफरत नही थी। और गाजीपुर से उन्हें बडा प्यार था। इसीलिए जब वहशत ने यह कहा 'चचा, शहला यह केस लेकर मेरे पास आई थी। मैंने बहुत मना किया। वह नही मानी तो मैंने कहा, फिर कोई हिन्दू वकील कर लो। हिन्दुओ के मुकदमे मेरे पास यू भी कम थे। मुसलमानो ने सारे मुकदमे मेरे हाथ से निकल गए। मैंने कई जगहो पर अप्लाई कर रखा था। कल एक जगह से अपाइटमेट लेटर आ गया है। मैं वकालत छोड रहा हूँ और इसलिए आपके पास आया हूँ कि इस मुकदमे म भी पेश होना चाहता हूँ। पहले आता तो लोग कहते कि हिन्दू मुकदमो के लालच म आया हूँ'

बाबू साहब की समझ म बात आ गई।

और कल वह शहला की जिरह करनेवाला था। कल ही पहली बार वह शहला को ठीक से देखनेवाला भी था। यह भी क्या मुलाकात होगी कि वह गवाहो के कटघरे मे होगी और मैं गाऊन पहने उसे गलत साबित करने की कोशिश कर रहा हूँगा। फिर भी 'नही' से 'हाँ' अच्छा होता है। गाजीपुर छोडने से पहले वह शहला के नाक नक्श को महत्त्वपूर्ण नजीरो की तरह याद कर लेना चाहता था। कल वह वकीले मुखालिफ होगा और शहला गवाह। वह घण्टो जिरह कर सकता है और घण्टो शहला को देख सकता है

शहला ने आँखें उठाकर देखा। ठाकुर साहब मिसिल देख रहे थे। उसने आँसू पोछ डाले। उसे अपने आप पर बडा गुस्सा आ रहा था कि उसने यह कमजोरी क्यो दिखाई। इससे कही ज्यादा अच्छा तो यह हुआ होता कि वह चुपचाप हिन्दू हो गई होती और ठाकुर शिवनारायण की पत्नी को घर से निकालकर उस घर म जा बैठी होती!

यह सोचते-सोचते उसने उस दीवार की तरफ देखा जिस पर जिन्ना साहब की तस्वीर टँगा करती थी। दीवार पर अब तक उस तस्वीर का दाग था।—क्या यह याद का दाग है जो कभी मिट ही नहीं सकता!

द

जुडिशियल मैजिस्ट्रेट की अदालत का कमरा बाहर के खुले मदान और कचहरी आनेवाली सडक तक, भरा हुआ था। हथियारबन्द पुलिस का पहरा लगा हुआ था। शहर मे दफा चव्वालीस थी। परन्तु मौलाना फ़हीमी, अनवारुल हसन बांके बिहारीलाल, पब्बरराम, सभी का कहना यह था कि पांच स अधिक आदमी कहा हैं। सब लोग अकेल हैं। सडक पर हजार आदमी होत हैं तो क्या वह दफा चव्वालीस तोडत हैं? सब अकेले होत हैं।

अकेल। क्या इस एक शब्द से ज्यादा भयानक कोई और शब्द है किसी शब्दकोश मे! वहाँ सब अकेले थे। वास्तव म अकेल थ। दूकानें बन्द कर आए थ। परछाइयो का घर छोड आए थ। सब अकेल थे। अन्दर भी सब अकेले थे। गवाहो के कटघरे म खडी हुई शहला अकेली थी। वकीलो की बेंच पर बठा हुआ वहशत अकेला था। मुजरिमो क कठघरे म खडे दीनदयाल, अदालत की कुरसी पर बठा हुआ जुडिशियल आफिसर, सब अकले, अलग अलग बातें करन साचने म गुम!

शहला वहशत को दख रही थी। वहशत शहला को देखना चाहता था। ठाकुर शिवनारायण सिंह शहला का बयान दिलवा रहे थे। शहला बयान दे रही थी। और उसकी आवाज़ अकली थी।

तब आखिर यह दुनिया क्या है?

तनहा लोगो की इक महफिल!

फूल अकेले,
खुशबू तनहा।
आंख अकेली,
आंसू तनहा?
लफ्ज़ अकेले,
जादू तनहा।
नींद अकेली
आगन तनहा।

' यह हवेली मेरे बुजुर्गों की है। वह हिंदू थे और जो वह किसी वजह से मुसलमान न हो गए होते तो मैं भी आज हिंदू ही रही होती। तो क्या अगर मैं वहां अपने दादा की समाधि बनाती तो यह दीनदयाल दादा योंही मुलजिमों के कठघरे में दिखाई देते? "

वहशत अपनी जगह पर खड़ा हो गया। बाबू बांके बिहारीलाल अपनी जगह पर बैठे रहे।

"योर आनर!" उसने अदालत को आवाज़ दी। शहला ने चौंक कर उसकी तरफ देखा। अदालत ने पेशकार की तरफ देखा। बांके बिहारीलाल के मुंशी ने हाथ बढ़ाकर वहशत का वकालतनामा अदालत के सामने रख दिया।

"मुस्तगीसा को बयान देने का पूरा हक है। मेरी सिर्फ यह गुज़ारिश है कि अदालत पब्लिक से खाली करवा दी जाए क्योंकि '

"अगर मेरा घर लोगों से खाली नहीं करवाया जा सकता तो अदालत क्यों खाली करवाई जाए!'

"मुसम्मात शहला देवी को आगाह किया जाता है कि यदि उन्होंने फिर वकील सफाई को या टोका तो उनके खिलाफ कंटेम्प्ट आफ कोर्ट की कारवाई की जाएगी। हां, आप क्या कह रहे थे वकील साहब?"

"मैं यह अर्ज़ कर रहा था कि इस मुकदमे की नौईयत ज़रा मुख्तलिफ है इसलिए "

'योर आनर, भले ही कंटेम्प्ट में मुझे सज़ा दे दें शहला बोली,

"लेकिन इन वकील साहब को इसी मुकदमे मे मैं फीस के दस रुपये दे चुकी हू।"

वहशत सन्नाटे म आ गया।

"मुस्तगोसा मेरे पास मुवक्किला की हैसियत से नही आई थी योर आनर, दोस्त की हैसियत से आई थी। और इसलिए मेरा वकालतनामा इज़ क्वाइट इन आडर।"

और खुदा न करे, मेरी आपकी दोस्ती कब थी वकील साहब? योर आनर, अगर यह मरे दस रुपये लौटा दें तो मैं इनके वकालतनामे पर अपना एतराज़ वापस ले लूगी।"

ठाकुर शिवनारायण सिह ने वहशत की ओर देखा। जी हा, दस रुपए देकर खिचवाई थी। छोडिए इन लकीरो का ठाकुर साहब। क्योंकि हर लकीर एक जगह से शुरू होकर दूसरी जगह खत्म हो जाती है। ठाकुर साहब मैं आपको फीस म नही मिल सकती। किसी दिन पूरे बन-कर आइए मेरे सामने-सामन तब दखू कि आप कसे लगत है मुझे। आप अपन घर की एक इट ह। सिफ एक इट। मैं कुरआन नही हूँ जिसे हर मुसलमान चूम सकता है, आँखो से लगा सकता है और गले म डाल कर घूम सकता है। मुझे सिफ वही छू सकता है जिसे मैं छूने की इजाजत दू। जिसे म छूने की इजाजत दू। जिस मैं छूने की इजाज़त दू। आप मुझे छूनेवाले पहल ही आदमी रहेगे। पहले ही आदमी रहगे। पहले ही आदमी रहेग। अजाम कुछ भी हो। कुछ भी हो। कुछ भी हो।

ठाकुर साहब यह नही देख सके कि वहशत न शहला के दस रुपये लौटाए या नही। वह अदालत की आवाज़ सुनकर चौके। मजिस्ट्रेट कह रहा था

ठाकुर साहब, बयान दिलवाइए।"

जो हुक्म सरकार।' ठाकुर साहब ने कहा।

अदालत न जाने क्या सोचकर मुस्कुरा दी। ठाकुर साहब ने रूमाल स अपना माथा पोछा जसे उनका प्यार उनके माथ पर लिखा हुआ हो।

हशमत घबराकर खडी हो गई। वहशत बैठा रहा।

दुल्हन बी कभी यह सोच भी नही सकती थी कि उनका बचकन यो हशमतिया जवानीपीटी की चारपाई पर बय्यठा दिखाई दीह ! परन्तु उन्होने शहरनाज ही के बारे मे यह कब साचा था कि वह यो अपनी जबाना की तेज धारवाली छुरी से बाप दादा की नाक कतरती हुई निकल जाएगी।

वह चुपचाप उठी और घडौंची तक गयी और एक कटोरा पानी पीकर लौट आयी। उन्होने त कर लिया कि अब इस घर म या तो वह रहेगी या यह झाडपीटी, दिमागढही, माटीमिली, छिनाल हशमतिया रहेगी।

परन्तु हुआ यह कि यह रात खत्म ही नही हुई।

बाबू बाके बिहारीलाल रोज सवेरे स्नान का जात थे। गगा दरवाजे पर बह रही हो तो कौन बदनसीब होगा जो स्नान नही करेगा। टेढी बाजार की घनी आबादी म उनका बडा पक्का मकान गगा से कोई दो फर्लांग दूर था। वह बहुत तडके ही निकल जाते थे। स्नान कर सूय-उदय का इन्तजार करत और कभी मौलाना राम की मसनवी का, कोई टुकडा और कभी रामायण के श्लोक गुनगुनात रहते और गगा के मैल्ते हुए पानी को देखते रहते। फिर सूय को 'जल' चढ़ाके वह लौट आत और फिर दुनिया का धन्धा शुरू हो जाता।

उनके रास्ते मे एक कुआ था। जब स बम्बे लग गए हैं तब से, अब कुएँ को कोई मुह नही लगाता। पर तु मुह लगाने या न लगान से क्या फक पडता है। कुआ अब भी वही गडा हुआ था। वह आत-जाते उस कुएँ को देखा करते थे। कुआ बरसो से अकेला पडा हुआ था। इसीलिए जब लौटते समय कुएँ पर भीड नजर आई तो उन्हे बडा आश्चय हुआ। उनकी चाल तेज हो गई।

'ई बहिनचोदन का ई हौसला "

"माँ चाद डालेंगे हम लोग ई मोसडीवालन का !"

उहा पाकिस्तान जाके काहे न मा चोदात सब, भाइ ?"

बाबू साहब तक गालिया की आवाज साफ आ रही थी।

"क्या बात है भई ?" उन्होंने एक नौजवान से पूछा।

– "भोसडीवाले गउ काटके डाल गए हैं कुआँ म।"

बाबू साहब ने झाँककर देखा।

गाय थी।

गाय कटी हुई थी।

कटी हुई गाय अपनी बडी-बडी काली और भोली आँखों से बाबू साहब की तरफ देख रही थी।

"मुसलमानों ने यह मनो गोश्त खराब क्यों किया। खा क्या नहीं गए ?" उन्होंने पूछा।

"उह भोसडीवालन से पूछिए न जाक।"

बाबू साहब ने फिर झाँका। गाय मे उन्हें कोई गडबडी दिखाई न दे रही थी। और तब वह एकदम से चौंक पडे। गाय गलत जगह से कटी हुई थी!

"यह गाय मुसलमानों ने नहीं काटी है।" बाबू साहब ने कहा।

'हट लाला साला।" एक नौजवान बिगडा 'मियाँ लोग ना काटिन हैं त का तार बाप काट गए हैं।'

"अरे इ कायस्थ है। इ साले त आधे मियाँ होते ही हैं।"

टेढी बजार मे क्या हो रहा था इसकी खबर शहला को तो थी नहीं। वह ठाकुर साहब के घर जाने के लिए चल पडी।

उसे शुजाअलपुर के नुक्कड पर पता चला कि बाबू बाँके बिहारी-लाल का उनके दरवाज़े के कुएँ के पास मुसलमानों ने मार डाला। बिचारे गगा नहाके लौट रहे थे।

'तब त आगे बढे म खतरा है।" जोखन रिक्शेवाले ने कहा।

वह चुप रह गई।

रिक्शा लौटा।

जोखन सोच रहा था कि जो वह हिन्दू रहा होता त एह वखत मज़े म हम एकी लते होते। किसमते साली गाड है। हम्मे मुसलमान होए की का जरूरत रही

"ए जोखन!"

इस आवाज़ को वह कसे न पहचानता ! वेहाल शाह की आवाज़ थी। रिक्शा रोकके उसने जोखन की तरफ देखा। शाह साहब लपक आए।

'सलामालकुम शाह साहब।"

"इ तू एह बखत कहा जा रहियु। ऐं ? मुसलमानन का कत्लेआम हो रहा "

उन्होंने हाथ पकडके शहला को उतार लिया। "जा कोतवाली मे बोल दे कि बीवी हिन्नी है। दरोगाजी आके इन्हे हिफाज़त से घर पहुचाय दें।" जोखन से यह कहते हुए वह शहला को लगभग घसीट ले गए अपन घर म। जोखन पुलिस की तलाश मे चला गया। शाह साहब ने दरवाजा बन्द कर दिया।

शहला पाव लटकाए पलग पर बठी हुई थी। शाह साहब उसी के पास बैठ गए।

अल्लाह बस। बाकी हवस !

बाकी हवस ।

हवस ! ।

बलवाई जब घर मे घुसे तो नगी शहला बेहोश पडी थी। और शाह साहब तहमद बाँध रहे थे।

बलवाइयो ने शाह साहब को एक तरफ हटा दिया। शहला के नगे बदन पर दाता के निशान थ। वह निशान देखकर सबको खयाल आया कि शाह के मुह म भी दात हैं

जब पुलिस आई तो वहाँ कोई नही था। केवल दो लाशें थी। शहला की लाश नगी थी। शाह साहब की लाश नगी नही थी। शहला की लाश पर दातो के निशान थ। शाह साहब की लाश पर दाँतो के निशान नही थे।

बाहर सडक खामोश थी।

और सूरज ओस की बूद को ढूढ़ रहा था।

।। बयाने-तहरीरी ।।

मन कि मासूम रज़ा वल्द सय्यद बशीर

मन कि मासूम रज़ा वल्द सय्यद बशीर हसन आब्दी हाल साकिन ८३, ए, हिल रोड, बादरा, बम्बई ५० का हू ।

मैं ब क्दे होशो हवास यह बयान दे रहा हूँ कि जहा तक मुझे याद आता है सन् '३२ के बाद से गाज़ीपुर म कोई बलवा नही हुआ है । परन्तु हर वह शहर और कस्बा और गाव गाज़ीपुर है जहा बलवा हो । मैं हि दुस्तान और पाकिस्तान के हर शहर का बेटा हू । जो घर जलता है वह मेरा घर है । जिस औरत के साथ ज़िना किया जाता है वह मेरी मा, मेरी बहन और मेरी बेटी है । (वसे मरी बटी अभी केवल ढाई साल की है । उसका नाम मरियम है । बडी प्यारी बच्ची है । मैं ख़फा हो जाता हूँ तो लिपटकर प्यार करने लगती है । उसकी तस्वीर मेरे लिखने की मज़ पर है । वह अपनी मां की गोद म बठी मुस्कुरा रही है ।) इसलिए मुझसे यह न पूछा जाए कि गाज़ीपुर मे तो कोई बलवा नही हुआ फिर तुमने दो दो बलवे कैसे दिखा दिए । गाज़ीपुर मेरे दिल म है और हि दुस्तान (पाकिस्तान समेत) ग़ाज़ीपुर मे ।

कहते हैं कि हर कहानी मे कथाकार किसी-न किसी रूप म अवश्य मौजूद होता है । मैं इस कहानी म अपने-आपको नही पहचान पा रहा हूँ । शहला, शहरनाज़, दुल्हन बी, हाजरा, हशमत, मुसम्मात अकबरी बीबी, वहशत, वज़ीर हसन, हयातुल्लाह अंसारी, दीनदयाल राम अवतार, ठाकुर शिवनारायण, बाबू बाके बिहारीलाल जोखन मैं कहाँ हूँ ? मैं तो इनम से किसी से भी सहमत नही हूँ ।

तो मैं शायद गाज़ीपुर हूँ । बेबस और अकेला गाज़ीपुर ।

आज २९ मई सन् '७० को अपनी पत्नी और-बेटी-की-तस्वीरा के सामने यह लिख दिया ताकि सनद रह ।

—राही मासूम रज़ा

"कम्युनलिज्म सिर्फ कम्युनलिज्म है, भाई बुखारी ! जब तक हम उसे हिन्दू-मुसलमान और बंगाल-पंजाब में बाँटते रहेंगे तब तक शहर जलते रहेंगे। लेकिन आप यह बात नहीं समझेंगे।'